



RNI-MAHBIL/2010/33592

L/2010/33592

# જૈન તીર્થવંદના



वर्ष : 12  
VOLUME : 12

अंक : 2  
ISSUE : 2

मुम्बई, मई २०२२  
MUMBAI, MAY 2022

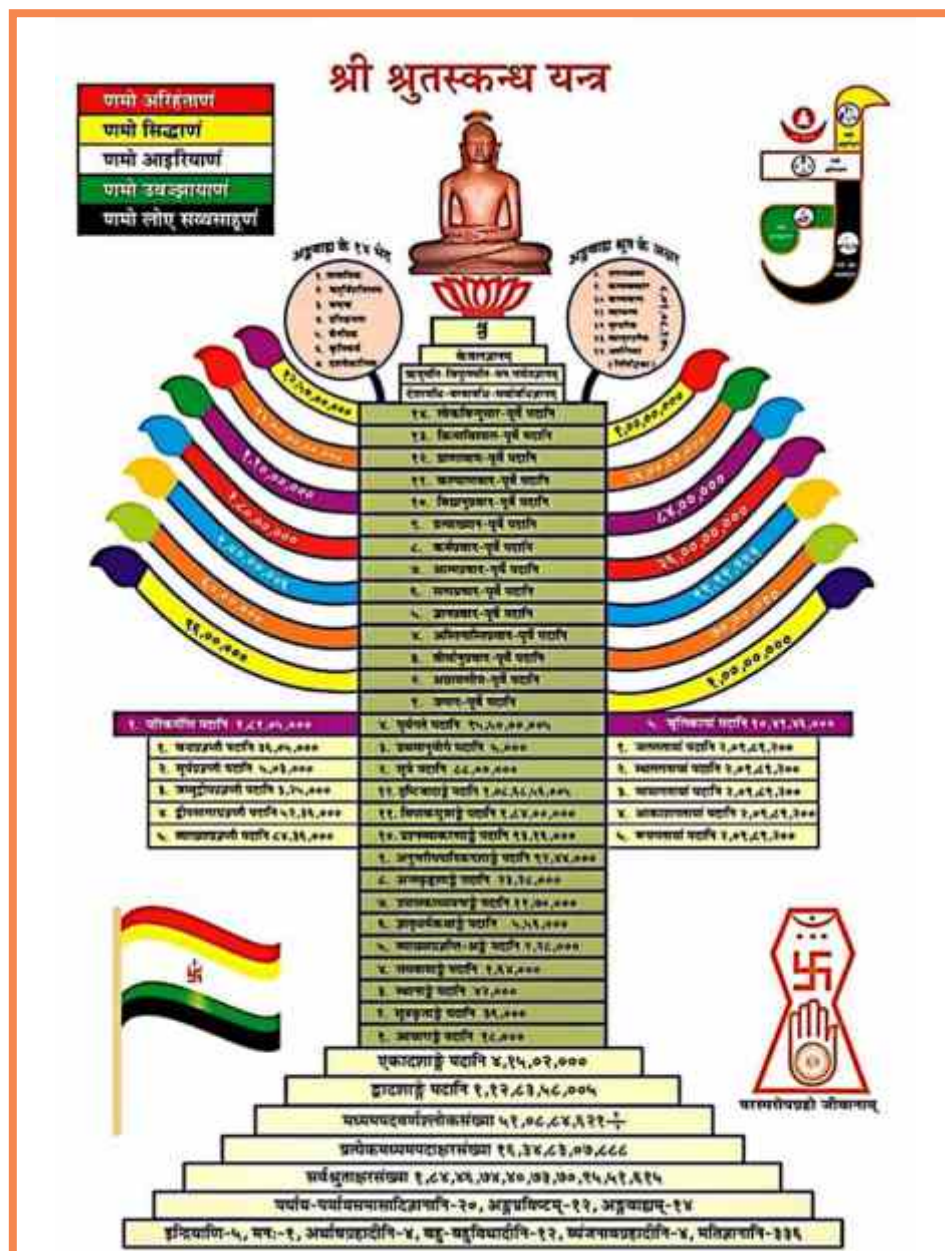
पृष्ठ : 36  
PAGES : 36

मूल्य : 25  
PRICE: 25

हिन्दी  
English Monthly

## भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी का मुखपत्र

वीर निर्वाण संवत् २५४८





# जैन तीर्थवन्दना

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी एवं  
भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र ट्रस्ट का

## मुखपत्र

वर्ष 12 अंक 2

मई 2022

श्री शिखरचन्द्र पहाड़िया

अध्यक्ष

श्री प्रदीप जैन (पी.एन.सी.)

उपाध्यक्ष

श्री वसंतलाल दोशी

उपाध्यक्ष

श्री नीलम अजमेरा

उपाध्यक्ष

श्री गजराज गंगवाल

उपाध्यक्ष

श्री तरुण काला

उपाध्यक्ष

श्री संतोष जैन (पेंढारी)

महामंत्री

श्री के.सी. जैन(काला)

कोषाध्यक्ष

श्री खुशाल जैन (सी.ए.)

मंत्री

श्री विनोद कोयलावाले

मंत्री

श्री जयकुमार जैन (कोटावाले)

मंत्री

### प्रधान सम्पादक

प्रो. (डॉ.) अनुपम जैन, इन्दौर

### सम्पादक

उमानाथ रामअजोर दुबे

सम्पादकीय सलाहकार

डॉ. अनेकान्त जैन, दिल्ली

श्री सुरेश जैन (IAS), भोपाल

श्री वसंतशास्त्री, चेन्नई

श्री धरमचंद शास्त्री, दिल्ली

श्री राजेन्द्र जैन 'महावीर', सनावद

डॉ. सुनील जैन 'संचय', ललितपुर

पं. (डॉ.) महावीर शास्त्री, सोलापुर

श्री प्रकाश पापड़ीवाल, औरंगाबाद



पत्रकारों का जैन तीर्थों के प्रति दायित्व

6

मानसिक शांति के अनूठे केन्द्र- जैन तीर्थ

11

जैन परंपरा : अक्षय तृतीया से शुरू हुई थी आहारदान की परंपरा

14

अयोध्या, इक्ष्वाकु और आदि तीर्थकर ऋषभदेव

16

तपस्या का फल

18

प्राकृत भाषा के प्रति जागरूकता ही है, श्रुत-संरक्षण का उपाय

19

महावीर के सिद्धांतों की प्रासंगिकता

21

कुतुबमीनार : जैन मानस्तंभ या सुमेरू पर्वत ?

23

सम्यग्दर्शन की महिमा

30

जैनाचार्यों द्वारा प्रतिपादित आत्मा का स्वरूप

31

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के सदस्य बनकर तीर्थों के संरक्षण-संवर्धन और उनके विकास में मार्ग दर्शन दीजिये

संरक्षक सदस्य	रु. 5,00,000/-	सम्माननीय सदस्य	रु. 31,000/-
परम सम्माननीय सदस्य	रु. 1,00,000/-	आजीवन सदस्य	रु. 11,000/-

नोट:

- 1) कोई भी फर्म, पेढ़ी, कम्पनी, धर्मादाय ट्रस्ट, संयुक्त कुटुम्ब, सोसायटी भी उपर्युक्त प्रावधान के अंतर्गत सदस्य बन सकेंगे। इस प्रकार की सदस्यता केवल 25 वर्षों के लिये होगी।
- 2) जो सदस्य आयकर की छूट चाहेंगे उन्हें 80जी के अंतर्गत कुछ रकम पर 80जी का लाभ मिलेगा।
- 3) सदस्यता से प्राप्त राशि ध्रुवफण्ड में जमा रहेगी उसके ब्याज की आय ही व्यवस्थापन एवं तीर्थक्षेत्र के संरक्षण, संवर्धन तथा उनके जीर्णोद्धार में व्यय की जायेगी।

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी को प्रेषित की जाने वाली राशि बैंक ऑफ बड़ौदा, वी. पी. रोड, मुंबई के सेविंग खाता क्र. 13100100008770, IFSC CODE BARB0VPROAD अथवा बैंक ऑफ इंडिया, सी. पी. टैंक, मुंबई के खाता क्रमांक 001210100017881, IFSC CODE BKID0000012 में किसी भी शाखा में निःशुल्क जमा कराकर उसकी सूचना मुंबई कार्यालय को देने की कृपा करें।

पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखकों के अपने हैं. सम्पादकों का इन विचारों से सहमत होना जरूरी नहीं है।

किसी भी विवाद का निराकरण मुंबई न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में होगा

कार्यालय: भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी, हीराबाग, सी.पी.टैंक, मुम्बई-400004  
फोन : 022-23878293 / 022-2385 9370  
website : www.tirthkshetracommittee.com, e-mail : tirthvandana4@gmail.com

मूल्य	
वार्षिक	: 300 रुपये
त्रिवार्षिक	: 800 रुपये
आजीवन (दस वर्ष)	: 2500 रुपये



## तीर्थसर्वेक्षण से तीर्थों का संरक्षण

भारतवर्ष में विभिन्न प्रान्तों में हमारे तीर्थकर भगवंतों एवं जैन धर्म के प्रतीक तीर्थक्षेत्र सुव्यस्थित विद्यमान हैं। जिसमें सिद्धक्षेत्र (निर्वाण क्षेत्र), कल्याणक क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र एवं कला क्षेत्र सम्मिलित हैं। जैन धर्म की पहचान तीर्थक्षेत्रों से है और हमारा दायित्व है कि हम अपने तीर्थों का संरक्षण करके जैनधर्म का जयघोष सदा गुंजायमान करने में अपनी भूमिका अदा करें। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी एवं अन्य तीर्थ कमेटियों द्वारा विभिन्न तीर्थों का सर्वेक्षण समय-समय पर होता आ रहा है। समय के अनुसार तीर्थों पर परिवर्तन होते रहते हैं इसीलिए समय-समय पर तीर्थों का सर्वेक्षण किया जाता है जिससे उस तीर्थ की वर्तमान स्थिति से सभी अवगत हो सकें और तीर्थ की अवस्था को जाँच कर आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

सम्पूर्ण मानव जाति एवं समस्त जीवों को भव-सागर से पार लगाने वाले मार्ग (मोक्षमार्ग) के प्रवर्तक तीर्थकरों भगवंतों, केवली भगवंतों ने मोक्ष को (निर्वाण को) प्राप्त किया ऐसे सिद्ध क्षेत्रों, जिस तीर्थ पर पांच कल्याणकों में से एक कल्याणक हुए, जहाँ के अतिशय ने श्रद्धालुओं को अधिक श्रद्धायुक्त बनाया, उन्हें धर्म प्रभावना के चमत्कारों से साक्षात्कार कराया, जहाँ के कला एवं पुरातत्व ने जैन धर्म का अस्तित्व दुनिया को बताया, जहाँ की पावनता ने प्रत्येक दर्शनार्थी के मन को निर्मल बनाया, ऐसे हमारे परम पवित्र पावन स्थानों में से कुछ अनादिनिधन तथा सदियों से पूज्यनीय हैं और जिनका वर्णन पुराणों-कथाओं की परम्परा से पुष्ट हुआ है।

भारत में सदियों से धार्मिक संस्कृतियों के साथ छेड़-छाड़ होती आ रही है, इतिहास में मुगलों द्वारा अनेकों मंदिरों, शास्त्रों का विध्वंस किया गया पश्चात् अंग्रेजों द्वारा भारतीय धर्मों के प्रभाव को कम करने का प्रयास किया गया तथा वर्तमान में भी जैनतीर्थों पर असामाजिक तत्वों द्वारा उपद्रव होने लगा है। परन्तु भारत अब एक स्वतंत्र देश है, संविधान के इस युग में धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार के साथ हमें अपने तीर्थों की रक्षा करनी है। हमारे तीर्थों पर आँख टिकाये बैठे उपद्रवियों से अपने तीर्थ संरक्षण के लिए प्रत्येक जैन नागरिक को अपना कर्तव्य समझकर तीर्थों की रक्षा करना है और प्रत्येक को इसे अपना उत्तरदायित्व समझना होगा।

शताधिक वर्षों से भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी श्री सम्मेदशिखर जी, श्री केशरिया जी, श्री गिरनारजी, श्री शिरपुर आदि-आदि क्षेत्रों में चल रहे न्यायाधिक विवादों में अपना धन-बल एवं समय देती आ रही है। सम्मेदशिखर जी का विवाद भी

अभी सामने एक समस्या का रूप लिए खड़ा हुआ है। जिसके लिए हमने समाज से सहयोग की अपील की है, तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा प्रकाशित अंक “जैन तीर्थवन्दना” में भी गत ६ माह से हमारे महामंत्री जी द्वारा शिखरजी केस विवाद के लिए समाज से सहायता की अपील की जा रही है।



हमें प्रसन्नता है कि हमारे समाज के पुण्यशाली साधर्मि भाई-बंधुओं द्वारा हमें सतत सहयोग प्राप्त हो रहा है आप सब के पुण्य की मैं अनुमोदना करता हूँ एवं तीर्थक्षेत्र कमेटी की ओर से आपका धन्यवाद प्रकट करता हूँ।

तीर्थ सर्वेक्षण एक आधारभूत, श्रम साध्य, समय साध्य एवं व्यय साध्य कार्य है। तत्काल में इसका परिणाम नजर न आये लेकिन इसका दीर्घकालिक महत्त्व है। तीर्थों का सर्वेक्षण कर तीर्थ की वास्तविक स्थिति से अवगत होकर तीर्थ के विकास हेतु रूपरेखा तैयार कर उसे गति देने की आवश्यकता है।

अधिकांश क्षेत्रों की प्राचीनता, इतिहास, अतिशय एवं पुरातत्व के बारे में जानकारी भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा प्रकाशित भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ के खंडों में संकलित हो चुकी है। कुछ स्थानों पर जीर्णोद्धारों से, नए निर्माणों से, नई पुरा सामग्री, प्रतिमा आदि मिलने से इतिहास बदलता है। उसका संकलन करना भी आवश्यक है।

समय के साथ-साथ देश और दुनिया में नए-नए परिवर्तन हुए हैं, तकनीक के इस दौर में सब कुछ सरल हो गया है। हमें अपने तीर्थों को तकनीक से जोड़ना चाहिए। तकनीक का उपयोग करते हुए हमें अपने तीर्थों के इतिहास, स्वामित्व संबंधी कागज, प्रमाण, फोटो-विडियो आदि का संकलन, फाईलीकरण के साथ-साथ डिजिटल डाटा भी सुरक्षित रखना है। अतः सभी तीर्थों के पदाधिकारियों से निवेदन है कि आप अपने तीर्थ सम्बन्धी सभी रिकॉर्ड को पुष्ट कर लें।



शिखरचन्द पहाड़िया  
राष्ट्रीय अध्यक्ष





## विनम्र निवेदन



तीर्थराज श्री सम्मेशिखरजी हमारा शाश्वत और परम पावन तीर्थ है। सांसारिक सुखों के त्याग से ऊपर उठकर हमारे आराध्य २० तीर्थकरों की यह सिद्ध भूमि है। अनादिकाल से हमारे अरिहन्त, आचार्य, उपाध्याय एवं साधु परमेश्वरों ने इस शांत, निराकुल तपोभूमि पर केवलज्ञान प्राप्त करके सिद्धपद को प्राप्त किया है। यह सिद्धभूमि, यह पर्वत हमारे लिए एक अनोखी निधि ही नहीं हमारी आन-बान-शान भी है। युगों-युगों से हमारे पूर्वज यहाँ आकर वंदना, पूजा-भक्ति का समर्पण अर्घ चढ़ाकर हर्षातिरेक में भावाभिभूत हो जाते हैं और कृत-कृत होने का अनुभव होता है। तीर्थराज श्रीसम्मेशिखरजी हमारी श्रद्धा, आस्था, भक्ति और साधना का प्रतीक है।

ऐसे परमपावन क्षेत्र का संरक्षण करना, इसका विकास करना ही हमारा सर्वोत्कृष्ट धर्म है। हमारे लिए यही रत्नत्रय है।

आज हमारे पुण्योदय की कमी के कारण यह परम वन्दनीय क्षेत्र विवाद का रूप धारण किये हुए है। जिन हाथों ने अभिषेक के कलश उठाये आज उन्हीं हाथों को तन-मन से सशक्त करते हुए साधन संकल्पित करने का समय आया है। हम सभी चाहते हैं कि सांसारिक जय-पराजय की अपेक्षा हमारा यह क्षेत्र सदा क्षमा निदान का रूप लेकर जीवंत रहे।

**मान्यवर तीर्थभक्त,**

गत 125 वर्षों से भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी सम्पूर्ण दिगम्बर जैन संघ का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्षरत है।

धर्मपालन के लिए व्यवस्थापन का यह अहिंसक संघर्ष अब निर्णायक दौर में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के सम्मुख सुनवाई के लिए बोर्ड पर आया है। तीर्थरक्षा के प्रयत्नों में अभी तक समाज के करोड़ों रुपये न्यायालय में खर्च हो चुके हैं जिसमें हाईकोर्ट में अब तक हमें सफलता भी मिली है। अब आखिरी निर्णय प्राप्त करने का वक्त आ गया है। समय की मांग है कि अपनी भक्ति एवं आस्था का संरक्षण करने के लिए हम सशक्त बनें। अब सुप्रीम कोर्ट में लिस्टेड केस सफलता पूर्वक संपन्न करने में पर्याप्त राशि की आवश्यकता पड़ रही है। इस चुनौती को पार करने में धनराशि एकत्रित करना समय की मांग है।

हम आपसे विनम्रतापूर्वक निवेदन करते हैं कि हम सभी जागृत होकर उदारता का परिचय देते हुए एक जुट होकर अपने आराध्य, तीर्थ के लिए दानराशि भेजकर तीर्थरक्षा का असीम पुण्य कमायें।

कृपया आप अपनी दान राशि “भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी” के नाम से बैंक ऑफ बड़ौदा, वी. पी. रोड, शाखा मुंबई - 4 के सेविंग खाता नं. 13100100008770 IFSC: BARB0VPROAD में जमा करावें तथा हमें सूचित करें ताकि आपको रसीद भेजी जा सके -

संतोष जैन (पेंढारी)

राष्ट्रीय महामंत्री





## सम्मदशिखर पवित्र तीर्थक्षेत्र घोषित करें

भारतीय परम्परा में तीर्थों का अत्यधिक महत्त्व सर्वविदित है। तीर्थस्थान प्रायः नगरों के कोलाहल से दूर एकान्त, वनों, पर्वतों अथवा नदियों के किनारे होते हैं। जैनधर्म के 24 तीर्थकरों ने जिन स्थानों से मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त किया है, उन्हें निर्वाण भूमि कहा जाता है।

24 तीर्थकरों में से 20 तीर्थकरों ने झारखण्ड राज्य स्थित गिरिडीह जिले के सम्मदशिखर पर्वत से मोक्ष प्राप्त किया है। एक प्राचीन कवि यति देवदत्त ने सम्मदशिखर माहात्म्य शीर्षक संस्कृत काव्य में लिखा है:-

**सम्मदशैलवृत्तान्तो महावीरेण भाषितः।**

**गौतमं प्रतिभूयः स लोहाचार्येण धीमता॥**

**तत्सद्वाक्यानुसारेण देवदन्ताख्यसत्कविः।**

**सम्मदशैल माहात्म्यं प्रकटीकुरुते घृणा॥**

अर्थात् इस काव्य की प्रामाणिकता के लिए कवि कह रहा है कि तीर्थकर महावीर ने गौतम गणधर के सम्मुख सम्मद शिखर का वृत्तान्त कहा था। उसे ही फिर से बुद्धि सम्पन्न अष्टम, नवम और दशम अंगधारी आचार्यों में से एक आचार्य लोहाचार्य ने कहा। जिनके सद्वाक्यों के अनुसार अपनी बुद्धि व्यवस्थित कर देवदत्त नाम का यह सत्कवि सम्मदशैल अर्थात् सम्मदशिखर की महिमा को इस काव्य में प्रगट कर रहा है।

वे इसी काव्य में आगे लिखते हैं-

**तत्रोत्तमे शैलवरे कूटानां विंशतिवर्षा**

**तत्रस्यान्सर्वदा वन्दे तत्प्रमाणा जिनेश्वरान्॥**

अर्थात् सिद्धक्षेत्रों में सर्वोत्तम श्रेष्ठ पर्वत सम्मदशिखर पर श्रेयस्कर बीस कूट हैं जिन पर अर्थात् बीसों कूटों पर बीस तीर्थकर के चरण चिन्ह हैं। कवि कहता है कि मैं उन तीर्थकरों को हमेशा हर क्षण नमस्कार करता हूँ।

जैन पुराणों के अनुसार इन तीर्थकरों के अतिरिक्त अनन्त मुनियों ने भी यहाँ से ही मोक्ष प्राप्त किया है। फलतः यह शाश्वत तीर्थ क्षेत्र है। इनकी मुक्ति के समय के पवित्र भावों एवं विचारों का चतुर्दिक वातावरण पर प्रभाव पड़ता है एवं सम्पूर्ण वातावरण में शुचिता, शान्ति, निर्वैरता एवं निर्भयता व्याप्त हो जाती है। इस प्रशस्त वातावरण एवं ऊर्जा का लाभ लेने के लिए ही सभी जैन श्रावक/श्राविकाएँ जीवन में न्यूनतम 1 बार एवं यदि संभव हो तो बार-बार इस परम पावन सिद्धक्षेत्र की वन्दना के लिए सम्मदशिखर आते हैं। फलतः लाखों जैन

श्रावक/श्राविकायें वर्ष भर सम्मदशिखर की वन्दना करने आते रहते हैं एवं 27 कि.मी. के वन्दना पथ पर रात्रि के अंतिम प्रहर से यात्रा प्रारम्भ कर अगले दिन अपरान्ह तक श्रद्धापूर्वक वन्दना पूर्ण करते हैं। 12-15 घण्टों की इस वन्दना अवधि में भक्तगण शुद्ध, श्वेत, सूती वस्त्र धारण करते हैं तथा स्वयं को मल-मूत्रादि के विसर्जन एवं भोजनादि से मुक्त रखते हैं।



अहिंसा जैन धर्म का मूल है। फलतः जैन परम्परा में न केवल अहिंसा परमोधर्म की शिक्षा दी जाती है अपितु यह जैन नागरिकों की जीवनशैली में समाहित है।

विगत वर्षों में विभिन्न राज्य सरकारों ने जैन जीवन शैली की पूर्णतः उपेक्षा कर सम्मदशिखर को पर्यटन स्थल के रूप में विकसित करने की ऐसी योजनायें बनाई हैं जिनसे क्षेत्र की पवित्रता, शुचिता एवं शांति नष्ट हो रही है। प्राप्त सूचनानुसार यहां ट्रेकिंग एवं भ्रमण हेतु आने वाले पर्यटक यहां तम्बाकू, शराब एवं मांसाहार का सेवन करते हैं जिसे देखकर जैन समाज के बंधु दुःखी होते हैं। भारत के अल्पसंख्यक समुदायों में से पारसी के बाद जैन सबसे कम जनसंख्या वाला समाज है किन्तु इनका राष्ट्रीय प्रगति एवं विकास में अभूतपूर्व योगदान है।

हम भारत सरकार से निवेदन करते हैं कि जैन धर्मानुयायी अल्पसंख्यक समाजजनों के धार्मिक अधिकारों को संरक्षण प्रदान करते हुए उनके इस परम पावन सर्वोत्कृष्ट तीर्थ को पवित्र तीर्थ क्षेत्र घोषित करने की कृपा करें। पालीताणा, अयोध्या, वाराणसी आदि को पवित्र क्षेत्र घोषित कर वहां की पवित्रता को संरक्षित किया गया है एतदर्थ हम सरकार के आभारी हैं।

कृपया सम्यक् आदेश प्रदान कर पवित्र तीर्थक्षेत्र सम्मदशिखर में मांसाहार, मद्यपान एवं तम्बाकू का सेवन तत्काल प्रतिबंधित कराने का कष्ट करें। इस क्षेत्र का विकास पर्यटन केन्द्र के रूप में नहीं अपितु पवित्र तीर्थक्षेत्र के रूप में हो।

चौपड़ा कुंड के पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर को पुनः तीर्थयात्रियों के दर्शनार्थ खोल दिया गया है। सभी सहयोगियों को धन्यवाद एवं समाजजनों को बधाई।

**डॉ. अनुपम जैन,**

ज्ञानछाया, डी-14, सुदामानगर, इन्दौर-452 009 (म.प्र.)

मो.: 94250 53822



## भा. दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा आयोजित निबन्ध (व्यावहारिक सुझाव) प्रतियोगिता के परिणाम घोषित

भा. दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा आयोजित निबन्ध प्रतियोगिता के समस्त निबन्धों का मूल्यांकन निम्नवत् त्रिसदस्यीय निर्णायक मण्डल द्वारा किया गया।

1. प्रो. वी.के. जैन, राजा का ताल, फिरोजाबाद
2. प्रो. वन्दना जैन, उज्जैन
3. डॉ. सुनील जैन 'संचय', ललितपुर

निर्णायक मण्डल द्वारा प्रदत्त अंकों के आधार पर निम्नवत् निर्णय किया जाता है:-

### उच्च शिक्षित वर्ग

- |  |         |
|--|---------|
| 1. डॉ. निर्मल कुमार जैन, टीकमगढ़         | प्रथम   |
| 2. सौ. रेखा भरत कुमार रायबाग जैन, नागपुर | द्वितीय |
| 3. श्रीमती संगीता जैन, इन्दौर            | तृतीय   |

### सांत्वना

- |                              |
|------------------------------|
| श्री सचिन्द्र जैन, हाथरस     |
| डॉ. रेखा जैन, टीकमगढ़        |
| श्रीमती आराधना जैन, ग्वालियर |

### पत्रकार वर्ग

- |                                       |         |
|---------------------------------------|---------|
| 1. श्रीमती उषा पाटनी, इन्दौर          | प्रथम   |
| 2. श्रीमती रेखा पतंग्या, इन्दौर       | द्वितीय |
| 3. डॉ. (श्रीमती) अल्पना जैन, ग्वालियर | तृतीय   |

### सांत्वना

- |                                    |
|------------------------------------|
| डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन, बुरहानपुर |
| श्री संजीव जैन 'संजीवनी', इन्दौर   |
| श्रीमती सपना जैन, इन्दौर           |

प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कारों के अन्तर्गत क्रमशः 21,000=00, 11,000=00 एवं 5,000=00 तथा सांत्वना पुरस्कारों के अन्तर्गत रु. 2000/-

(प्रत्येक) तथा प्रमाण पत्र एवं साहित्य प्रदान किया जायेगा।

पुरस्कार समर्पण समारोह के दिनांक एवं स्थल की घोषणा शीघ्र की जायेगी।

समस्त विजेताओं को हार्दिक बधाई।

03-05-2022

डॉ. अनुपम जैन  
प्रधान सम्पादक

## भा.दि.जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा आयोजित निबन्ध प्रतियोगिता, वर्ग २ में प्रथम स्थान प्राप्त निबन्ध पत्रकारों का जैन तीर्थों के प्रति दायित्व

- श्रीमती उषा पाटनी, इंदौर

तीन लोक के तीर्थ को वंदू नित प्रति सुबह शाम,  
जैन धर्म की ध्वजा फहराऊं, देव शास्त्र गुरु करू प्रणाम  
कलम उठाकर सबसे पहले लिख लूँ महामंत्र णमोकार  
हर दायित्व निभाऊं अपना, सार्थक नाम करू पत्रकार

### सौभाग्य :-

एक पत्रकार की श्रेणी में आता है मेरा नाम, समाचार बनाकर सभी तक पहुँचाना मेरा काम, जैन तीर्थ से गौरान्वित है भारत का नाम, नवदेवताओं को करती हूँ प्रणाम। एक पत्रकार होने के नाते मुझे अपने दायित्वों को भलीभाँति जानकर, सजगता से पूर्ण करने के सार्थक प्रयास करने हैं। यह सत्य है कि मैं देश की पहरेदार सैनिक नहीं हूँ, परन्तु यह भी उतना ही सही है कि मैं अपनी कलम की ताकत से देशवासियों के हृदय में भारतमाता तथा भारतीयता के प्रति श्रद्धा तथा समर्पण के भावों को वृद्धिगत तो कर सकती हूँ।

पुण्योदय से प्राप्त इस मनुष्य योनि में ईश्वर की कृपा से मेरे पास विचार करने का सामर्थ्य है, विचारों को आकार देकर कलम से कागज पर शब्द रूप उतार-कर मैं प्रयास करती हूँ कि समाज के प्रति अपना दायित्व निर्वाह कर सकूँ।

इससे भी अधिक गर्व की बात यह है कि मेरा जन्म जैन कुल में हुआ, जहाँ मुझे

आत्मा को परमात्मा बनाने की कला सिखाने वाले तीर्थंकरों का दर्शन मिला, मुनियों के मुखारविंद से जिनवाणी श्रवण करने के बाद उसे हृदयगम करके सत्य-अहिंसा के अपराजेय पथ पर चलने का हौसला मिला। तीर्थंकरों की शाश्वत जन्मभूमि अयोध्यादि तथा शाश्वत निर्वाण भूमि सम्मदशिखरजी के साथ ही निर्वाण क्षेत्र, सिद्ध क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र, मंगल क्षेत्र तथा कला क्षेत्रों के रूप में तीर्थ क्षेत्रों की अनमोल धरोहर विरासत में मिली। समस्त विघ्न बाधाओं को नष्ट करके जीवन को मंगलमय बनाने वाला णमोकार महामंत्र मिला और इन सबसे हमारा परिचय कराने वाले चलते फिरते तीर्थ के रूप में दिगम्बर संत मिले। इतना कुछ हमें मिला तो हम देना भी तो सीखें, अब धर्म, समाज, संस्कृति और राष्ट्र का गौरव बढ़ाना हमारा दायित्व है। कहते हैं एक सजग पत्रकार की ताकत उसकी कलम में रहती है, जब उसकी कलम शांत भावों के साथ चलती है तब समाज का निर्माण और विकास होता है और तब शांति का साम्राज्य होता है। किन्तु जब एक पत्रकार की विद्रोही कलम अन्याय, अत्याचार, अनैतिकता तथा अनधिकार चेष्टा के विरुद्ध चलती है तो वह तलवार का काम करती है, उसकी पैनी धार का वार सरकार का तख्ता पलटने तक की सामर्थ्य रखता है। भारतीय प्रजातंत्र में पत्रकारिता को चौथा



स्तम्भ माना गया है जिसका काम शासन पर नियंत्रण करना होता है। पत्रकार को राष्ट्र का सजग पहरेदार भी कहा गया है जो नुकसान पहुँचाने वाली बुरी ताकतों को द्वार के अन्दर प्रवेश भी नहीं करने देता है। पत्रकार तो वह सेवा भावी समाज सेवी है जो बिना शास्त्र के विरोधी पक्ष से लड़ने का हौसला रखता है तथा अपनी कलम के प्रभाव से सुशुभ समाज में “जागते रहो” का सन्देश भी देता है।

**अत्याचार, अनाचार के विरुद्ध करता है प्रतिकार  
लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहलाता है पत्रकार।  
सत्य के लिए जो लड़ता है, बनकर सब की आवाज़  
कलम चलाकर जागृत करता जैसे हो पहरेदार।**

### जैन तीर्थ – हमारी धरोहर- वर्तमान दशा :-

श्रमण संस्कृति के महापुरुषों में प्रथम तीर्थंकर से अंतिम तीर्थंकर महावीर पर्यंत सभी तीर्थंकरों एवं ऋषि मुनियों ने अपना साधना स्थल-प्रकृति के सुरम्य शांत अंचल में, निर्मल जल प्रवाहिनी सरिताओं के कूलों पर, सघन बन प्रांतलों में तथा पर्वत के उत्तुंग शिखरों पर बनाया तथा वहीं से उन्होंने अविश्व विश्व को 'सर्वजन हिताय सर्व जन सुखाय' सत्य – अहिंसा का ज्ञानदान दिया। उनके पावन चरण जहाँ पड़े, वह प्रदेश धन्य हो गया। उनके जीवन की कोई घटना जिस स्थान से जुड़ गयी या जहाँ से उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया, इतिहास ने उस स्थान को तीर्थ बनाकर अमरता प्रदान करके नाम दिया – **सिद्ध क्षेत्र**। जिस स्थान के अतिशय ने श्रद्धालुओं को धार्मिक श्रद्धायुक्त बनाया, उन्हें चमत्कारी प्रभाव से साक्षात् कराया वे क्षेत्र कहलाये – **अतिशय क्षेत्र**। कला ने इससे भी अधिक आश्चर्य का कार्य किया, उसने महापुरुषों के जीवन चरित्र को कला के माध्यम से पाषणों पर उकेरा और उसे अमर नाम दिया **कला तीर्थ**। हम अष्टापद को निर्वाण क्षेत्र, बावनगजा को सिद्धक्षेत्र, तथा श्रवणबेलगोला को कला क्षेत्र एवं महावीरजी को अतिशय क्षेत्र के कारण श्रद्धा से वंदन करते हैं। ये तीर्थ भारतीय संस्कृति का गौरव तथा जैन संस्कृति की अनमोल धरोहर हैं। सौन्दर्य बोध में अग्रणी, धनिक वर्ग की धार्मिक आस्था ने ही विशाल उत्कृष्ट कला के प्रतीक बहुमूल्य स्वर्ण, रजत एवं रत्नों की मूर्तियाँ, मंदिरों की कलाकृतियों को भव्यता प्रदान की है। ऋषियों के ज्ञान से निःसृत, लिपिबद्ध जिनवाणी के भण्डार इन तीर्थों पर विरासत के रूप में संग्रहित है। जिनका संरक्षण – संवर्धन करना हमारा परम कर्तव्य है। अष्टापद आदि ५ निर्वाण भूमियों सहित सैकड़ों तीर्थ स्थान, हजारों जिन मंदिर सहस्रों वर्षों से जैन धर्म की पताका विश्व में फहरा रहे हैं। इस समय जब भारत की भूमि पर आध्यात्मिक के स्थान पर भौतिकता ने पैर पसारें हैं, योगवाद पर भोगवाद हावी है। सज्जातीयता के भावों से विरक्ति ने विजातीय विवाहों को वृद्धिगत किया है। बड़े दुःख के साथ कहने में आता है कि भारत भूमि के गौरव, सहस्रों से जैनत्व को गरिमामंडित करने वाले जैन तीर्थ जिन्हें चेतन-अचेतन रूप में देखा जाता है उपेक्षित हो रहे हैं। हमारी उदासीनता, लापरवाही और प्रमादी भाव का परिणाम है तीर्थों की वर्तमान स्थिति जो अति गंभीर समस्या बन गयी है।

**गिरनार खिसक रहा हाथों से, केशरियाजी असमजंस में,  
वैशाली का रोया कण-कण, सम्मेदशिखर पे बुरी नजरें।  
जिनवाणी बंद अलमारी में, संतों की सुरक्षा पर खतरा,  
जीवंत तीर्थ है माता – पिता, उपेक्षा का दर्द है अश्रुभरा।**

बहुत ही विश्वास के साथ हमारे संतो ने, पुरखों ने तीर्थ रूपी विरासत हमें सौंपी थी। आज पुरखों से प्राप्त जैन तीर्थ रूपी अतुलनीय अपार संपदा को हमने समृद्ध करने के स्थान पर दूसरों के हाथों में सौंप दिया है, जिसके नुकसान का हम अनुमान भी नहीं लगा पा रहे। पर्वत की उन्नत चोटियों पर बैठकर, गुफाओं में बैठकर हमारे ऋषि मुनियों ने ताड़पत्रों पर ग्रन्थ लिखकर श्रुत की बहुमूल्य संपदा सौंपी इस आशा के साथ कि हमारे बच्चे जिनवाणी माँ की बात मानेंगे और सत्य, अहिंसा की राह पर चलकर विश्व में शांति का सन्देश प्रसारित करेंगे, किन्तु हमने जिनवाणी माँ की बात नहीं मानी। तप, त्याग, संयम की धज्जियाँ उड़ते हुए हमने पावन पर्वत पर जूते चप्पल पहनकर जाना चालू किया, पर्वत पर खाना – पीना चालू किया परिणाम सामने है, मकर संक्रांति का शर्मसार करने वाला दृश्य। सम्मेदशिखर जी जैसे २० तीर्थंकरों की निर्वाण भूमि अनादि शाश्वत क्षेत्र पर मांसादि की दुकानें देखकर भी कमेटी की चुप्पी, नेतृत्व का मौन, मन को कचोटता है। तीर्थों पर अभद्रता, अपवित्रता, बढ़ते देखकर भी हम उन्हें क्यों नहीं रोक पा रहे हैं? हमारे तीर्थों पर दूसरों का अनधिकृत कब्जा होते देखकर भी हम अनदेखा क्यों कर रहे हैं, क्यों हम दुष्कृत्यों का प्रतिकार नहीं कर पा रहे हैं? तब तो उत्तर हमें मौन रूप में मिलता है वह यह होता है कि कौन इनसे झगड़ा करे? यह तो हमारा काम नहीं कमेटी का काम है? हमें क्या करना है? और हम सारी शर्मसार गतिविधियों को देखकर भी अनदेखा कर जाते हैं? ऐसे समय में अंतर्मन को झंझोड़ने का कार्य कोई पत्रकार ही कर सकता है। जब एक पत्रकार का मौन मुखरित होता है, तब उसकी कलम चलती है और वह प्रण करता है –

**“अब ना मौन बैठूंगा, चलाऊंगा अपनी कलम  
आतताइयों को दूर भगा के ही मैं लूँगा दम  
अगर अभी नहीं उठी कलम, तो दृश्य ऐसा आएगा  
तीर्थ की तो बात क्या जैनत्व ना बच पायेगा।**

### दोषी कौन – हमारा मौन

जब तीर्थंकर नेमिनाथ भगवन की निर्वाण स्थली की पांचवी टोंक पर पंडों ने प्रथम बार कदम रखा तभी उन्हें रोक लिया होता तो गिरनार पर्वत की उर्जयंतगिरि पर जाकर नेमिनाथ भगवान् का जयकारा लगाकर हमें अलौकिक आनंद आता परन्तु जो उर्जयंत गिरि हमें उर्जा दे सकती थी, वहाँ से भय वश हम लोगों ने अपने कदम खींच लिए और गिरि की ऊर्जा से हिन्दुओं ने ऊर्जा ग्रहण कर ली, रोप वे बना और गिरनार पर उनका अधिपत्य सा हो गया। हम सभी जानते हैं कि काशीजी भगवान् पार्श्वनाथ, सुपार्श्वनाथ भगवन के जन्मादिकल्याणकों से पवित्र सदियों से विश्व को क्षमा सुनाती आ रही है पावनतम नगरी है परन्तु हमारे उपेक्षा के कारण काशी की प्रसिद्धि काशी विश्वनाथ के रूप में हो रही है, हालांकि हिन्दुओं ने इसके लिए ३५२ वर्षों तक लड़ाई लड़ी, परन्तु हम फिर भी जागरूक नहीं हुए। हमारे किसी नेतृत्व ने प्रधानमंत्री को याद नहीं दिलाया कि काशीजी पर हिन्दुओं से पहले जैनों का अधिकार है। यहाँ ३० माह तक प्रतिदिन रत्नों की वर्षा हुई है और हमारे पास इसके आगमिक प्रमाण है।

सैकड़ों पौराणिक साक्ष्य, यहाँ तक कि वेद पुराणों में भी कहा गया है कि सृष्टि के तीसरे काल में जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ भगवान ने अयोध्या में जन्म लेकर प्रजाजनों को असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प और विद्या आदि षट्कर्म सिखाये और स्वयं कठोर तपस्या करके अष्टापद से निर्वाण प्राप्त किया।





इसी भूमि पर भरत चक्रवर्ती ने जन्म लिया जिनके नाम से हमारे देश का नाम भारतवर्ष हुआ, परन्तु आम नागरिक तो क्या हमारे संतों ने भी (अपवाद को छोड़कर) कभी अयोध्या को जैन धर्मानुसार प्रकाशवान नहीं किया। एक नहीं पांच-पांच तीर्थंकरों के जन्म से गौरवान्वित अयोध्या का नाम आज राम जन्मभूमि से प्रसिद्ध हो रहा है और हम हिन्दुओं की जीत की तालियाँ बजाकर समर्थन कर रहे हैं। इतने ही प्रयास यदि हम जैन लोगों ने अपने लिए किये होते तो अयोध्या भगवान ऋषभदेव के नाम से जानी जाती। परन्तु हमारी चुप्पी ने हिन्दुओं को जीत दिला दी, मुस्लिमों का तो वहाँ कोई ऐतिहासिक वर्चस्व ही नहीं था फिर भी उन्होंने अपने धर्मस्थल की महत्ता को प्रकाशमान किया। हमारी उदासीनता के कारण कहीं श्वेताम्बर हम पर हावी हुए और कहीं हम अल्पसंख्यक का दर्जा पाकर बहुसंख्यक हिन्दू समाज के षड्यंत्र के शिकार बनते गये। हम होने वाले नुकसान से अंजान रहे और चमत्कार की आशा करते रहे।

**और हम खड़े-खड़े, मौन साधते रहे  
किसी चमत्कार की राह देखते रहे  
क्या हुआ नुकसान हमने ध्यान ही दिया नहीं  
हिन्दुओं की जीत पर ताली बजाते रहे।**

संत शिरोमणी आचार्य श्री विद्यासागरजी ने एक कटुसत्य कहा है – 'आज हमारी अयोध्या योद्धाओं से खाली हो गई है।' वर्तमान में हम गणिनी प्रमुख आर्थिका रत्न श्री ज्ञानमतीमाताजी के प्रयासों को नमन करते हैं जो इतनी उम्र के बावजूद भी तीर्थंकरों की जन्मभूमियों के विकास में प्राणप्रण में जुटी हैं। उनका अगला ध्येय – 'अब की बारी – अयोध्या की बारी।' यदि हम अपनी शाश्वत भूमि अयोध्या को विश्वपटल पर भगवान ऋषभदेव के नाम से स्वर्णीकृत करना चाहते हैं तो सबसे पहले पत्रकारों को आगे आना पड़ेगा। उनकी योजनाओं का प्रचार – प्रसार करना होगा तभी हम अयोध्या को प्रकाश में ला सकेंगे।

**कौन कहता है सिर्फ बारूद से निकलती है चिंगारी  
उठ पत्रकार, अपनी कलम चला, आई है तेरी बारी**

**भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी का सकारात्मक प्रयास –  
लेख प्रतियोगिता**

तीर्थ हमारे श्रद्धा निष्ठा के सर्वोपरि केंद्र हैं और यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि जैन तीर्थ भारतीय संस्कृति की आत्मा है। तीर्थों से ही जीवन में धर्म का मंगल प्रवेश होता है। कहा जा सकता है कि जैन तीर्थ धर्म और संस्कृति के नाभि स्थल हैं। आज हमारे एक – दो, या दस – बीस नहीं हजारों प्राचीन तीर्थ उपेक्षित हो जीर्णोद्धार की बाट जोह रहे हैं। आज सारा विश्व मीडिया के जाल में मुग्ध है। तब भारतवर्षीय तीर्थरक्षा कमेटी ने भी जैन तीर्थों के संरक्षण संवर्धन हेतु पत्रकार के प्रति आशा भरी नजरों से देखा है और पत्रकारों को स्वयं की लेखनी से स्वयं के दायित्व लिखने के लिए प्रेरित किया है। कमेटी ने महसूस किया है कि भले ही संसार पत्रकार और पत्रकारिता को संदिग्ध दृष्टि से देखे परन्तु एक पत्रकार ही किसी की सोई आत्मा को अन्दर तक झिंझोड़ सकता है। एक पत्रकार ही है जो संतो के क्रदमों को तीर्थों तक ले जा सकता है। एक पत्रकार ही है जो नेतृत्व को कर्तव्य बोध करा सकता है, शासन को जैनत्व की गरिमा से परिचित करा सकता है। पत्रकार की चिंतन शक्ति को कमेटी ने दिशा दी है अब कमेटी के विश्वास पर खरा उतरने के लिए पत्रकार को अपनी कलम

चलाना होगा। स्वयं के जागृत होने का परिचय देकर समाज में जागृति का शंखनाद करना होगा। पत्रकारों को आव्हान करते हुए मैं यही कहना चाहूँगी :-

**यह वक्त सोने का नहीं, यह वक्त खोने का नहीं  
जागो तीर्थ खतरे में है, जैनत्व भी खतरे में है।  
दिल्ली के दिल से तुम उठो, जयपुर के साहित्य से उठो,  
उठो अभी गुजरात से, तमिलनाडु, आंध्र प्रान्त से  
उठो चलाओ अब कलम, बतला दो जाग गये हैं हम  
निर्ग्रन्थ अपनी शान है, तीर्थों में बसते प्राण हैं  
कह दो कोई दुश्मन नजर, भूल से ना उठे इधर  
कह दो कि हम होशियार हैं, कह दो कि हम तैयार हैं।**

**पत्रकारों का जैन तीर्थों के प्रति दायित्व -**

कहा जा सकता है कि जो दायित्व एक बागवान का अपने उपवन के सौन्दर्यीकरण के प्रति होता है, जो दायित्व एक माता – पिता का अपनी संतान के पालन – पोषण के प्रति होता है, जो दायित्व एक चिकित्सक का रोगी को उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करने के लिए होता है, जो दायित्व देश की सीमा पर खड़े सैनिक का अपने देश तथा देशवासियों की सुरक्षा के प्रति होता है, कमोवेश वैसा ही दायित्व एक पत्रकार का अपने जैन तीर्थों के निर्माण, संवर्धन, संरक्षण एवं सौन्दर्यीकरण के प्रति जनमानस को तैयार करने के लिए होता है। उचित समन्वय, उचित संतुलन एवं उचित सामंजस्य उसकी उन्नति के सोपान हैं तथा उत्साह, उमंग एवं ऊर्जा उसके जीवन का उध्वारोहण करते हैं। अपने आसपास लहराते घटना सागर में विचारों का मंथन करके प्राप्त अमृत को अपनी लेखनी द्वारा पत्र के माध्यम से औरों में बाँटकर उनमें नवीन चेतना का संचार करना ही पत्रकार का कार्य है। जिज्ञासा उसका प्रधान तत्त्व है संपादक, मीडिया प्रभारी या संवाददाता रिपोर्टर उसके रूप हैं। समाचार पत्र, टी.वी. पत्रकारिता, व्हाट्सअप, ट्विटर, फेसबुक आदि उसके माध्यम हैं। वर्तमान में जैन पत्र-पत्रिकाएं तीन रूपों में प्रकशित हैं।

१. किसी संस्था द्वारा २. किसी साधु-साध्वी की प्रेरणा और समाज के सहयोग से ३. स्वतंत्र रूप में।

इनका स्वरूप दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, त्रिमासिक, आदि रूप में मिलता है। पत्रकारिता के क्षेत्र में जैन पत्रकारिता का बड़ा योगदान है। पत्रकारिता स्वस्थ सामाजिक मूल्यों की नियामिका होकर वर्तमान समाज में आधुनिक सभ्यता का एक व्यवसाय मानी जाती है। ऐसे समय में जब पत्रकारिता को प्रभावी कारक के रूप में देखा जा रहा है, एक पत्रकार का जैन तीर्थ के प्रति क्या दायित्व है उसे जानना आवश्यक है

**तीर्थ वह है जहाँ जागृति ही जीवन है  
तो पत्रकार जीवन में जागृति लाता है  
तीर्थ वह है जहाँ वीतरागता ही वैभव है  
तो पत्रकार उस वैभव की रक्षा करता है  
तीर्थ वह है जहाँ सत्य ही संस्कार है  
तो पत्रकार सत्य की जांच करता है  
तीर्थ वह है जहाँ मुक्ति के चरण हैं**

**तो पत्रकार के विचार मुक्ति का मंगालाचरण है।**

**१. पत्रकारों से है आस – करें तीर्थक्षेत्रों का विकास** हमारे बहुत से शोधार्थी विद्वान् लेखक अपने शोधपूर्ण आलेखों के माध्यम से हमें लुप्त



प्रायः अति प्राचीन मंदिरों के बारे में जानकारी देते रहते हैं, जो उस क्षेत्र की अथवा उस राज्य की ही नहीं सकल जैन समाज की बहुमूल्य धरोहर मानी जाती है, जिनके प्रमाण साहित्य और शिलालेखों में मिलते हैं, इनमें कितने ही तीर्थ क्षेत्र ८ वीं सदी से १३ वीं सदी के मध्य की कला संस्कृति, वास्तुकला, स्थापत्यकला व शिल्प कला के बेजोड़ नमूने हैं। पत्रकारों का दायित्व है कि वे इन क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त करें तथा आसपास के क्षेत्रों में पोस्टर आदि लगाकर जागृति फैलाएं। जो क्षेत्र अन्य लोगों ने रूपांतरण करके अपने बना लिए हैं अन्य धर्मावलम्बियों के चंगुल से मुक्त करने हेतु प्रयास करें तथा आवश्यकतानुसार जीर्णोद्धार की प्रेरणा दें। आज मीडिया की पहुँच भारत के छोटे से छोटे गाँव तक है। संपर्क के लिए इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, व्हाट्सअप, फेसबुक आदि का उपयोग त्वरित परिणाम देगा।

- २ **मन में रखे ओज, करें सच्चाई की खोज** – एक पत्रकार के विचारों में ओज होना आवश्यक है। अपने क्रांतिकारी विचारों के द्वारा एक पत्रकार लोगों के मन में दबी भावनाओं को जगाता है। पत्रकार का दायित्व है कि वह जब तक सत्यता की जांच ना कर लें खबर नहीं छापे। किसी भी तीर्थ के बारे में जब कोई पत्रकार सुनी सुनाई बातों के आधार पर समाचार को आकार देता है तो पत्रकार कि विश्वसनीयता तथा तीर्थ की स्थिति पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। पत्रकार का दायित्व बताते हुए मैं कहना चाहूँगी –

“जागो, जागो हे पत्रकार, हाथ में थामों कलम हथियार  
पुकारे तीर्थ कई हजार, सुमरलों तीर्थ करो उद्धार  
सत्य का परचम लहराओ, स्वर्णयुग को वापिस लाओ।

- ३ **देखें मेप- बनाये एप** – यदि पत्रकार किसी तीर्थ को मुख्य रूप से प्रकाशित करना चाहता है। विशेष रूप से ऐसे तीर्थ जो घने जंगलों में बहुत ही सुनसान स्थान पर सदियों पूर्व बनाये गये थे जो जैन समाज की अनमोल धरोहर होकर ऐतिहासिक भग्नावशेषों के रूप में, वास्तुकला, शिल्पकला एवं स्थापत्य कला में बेजोड़ है, इनके गर्भ में कई रहस्य छिपे हैं पत्रकारों को भारत के नक्शों में इन्हें खोजना है और कलातीर्थ एवं के माध्यम से नेता, मंत्री, विद्वत्वरग को जोड़ना है। जैसे कि अजयपाल किला (अजयगढ़) जिला पन्ना में चंदेल शासकों द्वारा बनाये गये अंकगणित विधि से सजाये गये मंदिर हैं, जिसके बारे में लोगों का मानना है कि यहाँ किसी खजाने का रहस्य छिपा है।
- ४ **जानें उपगूहन करें स्थितिकरण** :- पत्रकार को चाहिए कि तीर्थ क्षेत्र पर अथवा जीवन्त तीर्थ संतों के साथ कौनसी घटना घटी है, घटना से सम्बन्धी सत्य जानकारी एकत्र करके नैतिकता के आधार पर व्यक्तित्व प्रतिष्ठा को बिना नुक्सान पहुंचाए, संतुलित भाषा में समाचार प्रकाशित करें। एक पत्रकार का दायित्व है कि वह शब्दों और शीर्षकों का चयन इस प्रकार करें कि विद्रोह की आग भड़क न सके। एक पत्रकार का दायित्व है कि वह  
संकित के उपगूहन को जाने, गोपनीय रखे व्यक्ति के नाम  
स्थितिकरण के द्वारा स्थित करके, काम को दे अंजाम।
- ५ **क्षमता का उपयोग करे भरपूर – पीत पत्रकारिता से रहे दूर** ; एक पत्रकार को चाहिए कि वह अपने पेशे के प्रति पूर्ण समर्पित रहे तथा

आवश्यकतानुसार अपनी क्षमता ( शारीरिक, आर्थिक) का प्रयोग करे तथा मानसिक शांति के केंद्र तीर्थ क्षेत्रों के प्रति अशांति, सनसनी फैलाने वाले समाचार अथवा ध्यान खींचने वाले अमर्यादित भाषा से पूर्ण शीर्षकों से बचे। ऐसी पत्रकारिता घटिया पत्रकारिता कहलाती है। ऐसे पत्रकारों को सही मार्ग दिखाने के लिए निम्न पंक्तियाँ सार्थक हैं –

**कुछ लोग लगन लेकर निकले**

**सीने में जलती अगन लेकर निकले**

**तरक्की तो उनको ही मिलती है**

**जो अपनी कलम की ताकत लेकर निकले।**

- ६ **हों वकील के समान दक्ष – सदा रहें निष्पक्ष** – कहा जाता है कि सफल पत्रकार वही होता है जो वकील के समान दलील दे सकें। क्योंकि जैन तीर्थ के आधिपत्य की बात हो, या उसे पवित्र बनाये रखने के नियम हैं। एक पत्रकार सप्रमाण दलील के द्वारा विपक्षी व्यक्ति, संस्था या समाज पर विजय पा सकता है।

मीडिया के बढ़ते प्रभाव ने आज पत्रकारों के इस गुण पर प्रश्नवाचक चिन्ह लगा दिया है। आज तो सरे आम कहा जाता है मीडिया बिक चुकी है, पत्रकार बिक चूका है और शायद इसीलिए हमारा समाज पेशेवर पत्रकारिता को अच्छा नहीं मानता। किन्तु जो निडर पत्रकार होता है उसकी ताकत राष्ट्र की प्रगति में विपक्ष से भी अधिक प्रभावी मानी जाती है। एक पत्रकार की व्यथा देखिये

**मुझ पर आरोप है कि मैं बिक गया हूँ**

**सत्य को छोड़ टी.आर.पी. की भेंट चढ़ गया**

**सवाल्लों के घेरे में आज मेरा आधार**

**मेरी निष्पक्षता है बीच मंझधार।**

- ७ **अनीतियों पर करें प्रहार – संगठन का करें विस्तार** ; पत्रकार यदि चाहता है कि उसकी बात का व्यापक प्रचार हो, जहाँ भी जिस किसी तीर्थ पर दमन, दोहन, अत्याचार, क्रूरता, हिंसा, अनीति, चोरी, और असंयम दिखाई दे वह कड़ा विरोध करने का साहस रखे। इसके लिए पत्रकारों का संगठन होना आवश्यक है। यह संगठन क्षेत्रीय, प्रांतीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर बने तथा क्षेत्रवार, कौशल अनुरूप पत्रकार गण तीर्थ विशेष के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह करे इससे जो परिणाम आयेंगे वे दूरगामी एवं विश्वसनीय होंगे।  
एक पत्रकार की कलम उसके विवेक और संस्कार का परिचय कराती है पत्रकारों को कलम उठाकर कुछ लिखने के पूर्व निम्न पंक्तियों पर ध्यान देना होगा।

**बहुत सोच विचारकर उठाना कलम**

**निर्जीव होकर भी सजीव का अभ्यास कराती है**

**भावनाएं, विवेक, विचार कहाँ है इनके पास,**

**ये तो आपके बुद्धि, विवेक और संस्कार का परिचय कराती है।**

- ८ **सदा रहे याद – करना है जागृति का शंखनाद** ; एक पत्रकार जब भी अपनी कलम उठाता है उसका उद्देश्य सुषुप्त समाज को जागरूक करना होता है। विकास के नाम पर होने वाले विनाश को रोकने हेतु पत्रकार को अपनी आवाज़ ऊँची करनी होगी। उदासीनता को उत्साह में बदलने पर ही हम आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, बांग्लादेश, बुंदेलखंड यहाँ तक कि



लाहौर तथा पाकिस्तान में मौजूद पुरासम्पदा एवं मंदिरों के प्रति जैन समाज के उपेक्षापूर्ण भावों में परिवर्तन ला सकेंगे। इसके लिए हम साहित्य की काव्य विधा का आश्रय ले सकते हैं। सोनागिर की बावड़ियाँ हो या सिरपुर का पुरा वैभव जैन तीर्थयात्रियों के आने की बाट जोह रहा है। हमें इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों का उपयोग करके जैन समाज के व्यक्ति को ही नहीं, बल्कि संत, पंथ और ग्रन्थ में विभक्त विचारों को परिवर्तन करने हेतु सक्रिय कदम उठाने होंगे। एक पत्रकार को अपने दायित्व की याद दिलाने वाली निम्न पंक्तियाँ बहुत ही सार्थक प्रतीत होती हैं :-

**धरा बेच देंगे, गगन बेच देंगे, कलि बेच देंगे, चमन बेच देंगे**

**कलम के सिपाही यदि सो गये तो, वतन के मसीहा वतन बेच देंगे।**

**९ पहले लेवें प्रशिक्षण – फिर करें लेखन** – जैन पत्रकारिता का बड़ा ही गौरवशाली इतिहास है। वर्तमान में जो पत्रकार जैन समाज में उभर कर आये हैं उनमें स्व. राजेन्द्र जी गोधा, का नाम बड़े ही आदर से लिया जाता है, संपादक कला में निष्णात डॉ. अनुपम जैन आदि के नामों से जैन पत्रकारिता गौरव पाती है। अपने सटीक एवं स्पष्ट विचारों को प्रकट करने में दक्ष तीर्थंकर पत्रिका के संपादक स्व. श्री नेमीचंद जी जैन, जैन पत्रकारों के लिए आदर्श व्यक्तित्व माने जाते हैं। जैन समाज में पत्रिकाओं का १५० वर्षों का गौरवमयी इतिहास है।

जब हम आज पत्रकारों की योग्यता का आकलन करें तो हमें ज्ञात होता है कि जैन समाज में जैन पत्रकार या पत्रकारिता सम्बन्धी कोई प्रबंध नहीं है आज जो भी पत्रकार हैं उनमें से विधिवत प्रशिक्षण प्राप्त बहुत कम हैं, कुछ तो वेतनभोगी संपादक हैं, कुछ मानद हैं, कुछ शौकिया हैं और कुछ समाचार पत्रों से सम्बद्ध हैं। प्रशिक्षित नहीं होने के बाद भी जब हम जैन पत्र-पत्रिकाओं के स्तर को देखते हैं तो गर्व से मस्तक ऊंचा हो जाता है और यदि पत्रकार विधिपूर्वक प्रशिक्षित हो जाए तो सोने में सुहागा होगा।

**१० जाने छह ककार – प्रभावी होगा समाचार** – मान लीजिये एक पत्रकार सम्मेलन पर हुई घटना, आदिवासियों के लिए देवस्थान बनाने हेतु भूमिपूजन का समाचार प्रस्तुत करता है तो उसे निम्न ६ ककारों के आधार पर रिपोर्ट तैयार करनी होगी। १) क्या हुआ २) कब हुआ ३) कहाँ हुआ ४) क्यों हुआ ५) किसने किया ६) किसके साथ हुआ। अपनी असीमित ऊर्जा और आकाशीय चेतना के साथ उक्त ६ ककारों के आधार पर रिपोर्ट तैयार करने वाला ही कुशल प्रभावी पत्रकार कहलाता है।

**११ निरंतर पत्राचार – जागेगी सरकार :-** अपने आपको अल्पसंख्यक घोषित करवाकर शायद हमने अपना ही नुकसान किया है।

आज जब सम्मेलनक्षेत्र पर गिद्धों की आँख लग गई है, स्थानीय प्रयास विफल हो रहे हैं। तीर्थ रक्षा कमेटी के निरंतर प्रयासों के बाद भी वैश्विक धरोहर तीर्थ सूची में मान्यता प्राप्त पर्वत पर मरांडी द्वारा अजा भवन का शिलान्यास होना मन को क्षुब्ध करता है। **सरकार चाहती है वोट इसीलिए नियत में आ रही है खोट** इस बात को पत्रकारों द्वारा जोश के साथ रखना होगा। उसे बताना होगा।

तीर्थ ये महान है, ये जैनियों की शान है, शिखरजी जैनियों का सम्मान है। जैनियों के मान पर आंच जो आई अगर, सरकार को पलट के रख देंगे हम। इसके अतिरिक्त तीर्थक्षेत्रों के अस्तित्व सम्बन्धी मुकदमों के प्रति सहयोगात्मक रवैया रखें। तीर्थ क्षेत्रों पर यात्रियों के लिए समस्त सुविधाएँ जुटाने हेतु जो भी सरकारी प्रयास आवश्यक है उन्हें पाने हेतु जाग्रति व तत्परता के साथ

विधि/कानून का ज्ञान होना आवश्यक है।

**१२ करें प्रयास – तीर्थों पर हो संतों का चातुर्मास ;** जब पत्रकार को किसी प्राचीन किन्तु उपेक्षित तीर्थ की जानकारी मिले और ऐसा महसूस हो कि यदि कोई संत यहाँ आ जाये तो तीर्थ का उद्धार हो सकता है, तो क्षेत्र के पदाधिकारियों से चर्चा करके, अपने पत्रकारिता की क्षमता का यथाशक्ति प्रयोग करके किसी भी संत अथवा आचार्य संघ को चातुर्मास हेतु लाने का प्रयास करें इससे क्षेत्र पर यात्रियों का आवागमन बढ़ेगा तथा श्रेष्ठी जनो के मन में क्षेत्र विकास के जीर्णोद्धार के प्रति भावना जागृत होगी, उनके द्वारा प्रदत्त दान राशि तीर्थ के विकास में उपयोग आ सकेगी।

**१३ क्षेत्र के प्रति जगाए चेतना – पत्रिका में एक लेख, सन्देश अवश्य लिखना :-** प्रायः प्रत्येक पत्रकार किसी न किसी पत्र/पत्रिका के संपादक, लेखक के रूप में जाना जाता है। पत्रकार का दायित्व है कि वह अपने पत्र के, प्रत्येक अंक में प्राचीन तीर्थ, नवीन तीर्थ, निर्माणाधीन तीर्थ, जीवंत तीर्थ (मुनि) आदि के बारे में पूर्ण जानकारी/विशेष जानकारी से सम्बन्धित समाचार अवश्य दें। यदि संभव हो तो सचित्र समाचार दें।

अंततः

**उषा गाती मधुर प्रभाती, चलें अपनी कलम उठाये,**

**उदित ज्ञान-रवि के प्रकाश में, नव जागृति सन्देश सुनाएँ।**

'न भूतो न भविष्यति' का नारा देते हुए कुण्डलपुर महामहोत्सव के मनोहारी दृश्यों के साथ विशालकाय बड़े-बाबा करोड़ों भारतवासियों के दिलों में विराजमान हो गये हैं। यह सिद्ध हो गया कि जन-जन के मन में धार्मिक आस्था का गहरा सागर अनवरत लहराता रहता है बस उस जाल में डुबकी लगाने की प्रेरणा देने वाला कोई माध्यम होना चाहिए तब यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि वह सशक्त माध्यम पत्रकारिता ही है।

यह हमारे लिए बड़े गौरव की बात है कि म.प्र. के मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान ने कुण्डलपुर को पावन क्षेत्र घोषित किया है निश्चित रूप से प्रभु की कृपा, गुरु के आशीर्वाद तथा नेतृत्व के प्रयास का परिणाम है, परन्तु पत्रकारिता के प्रभाव को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। अब हमें प्रण करना है कि यह कलम ना रुकेगी ना थकेगी। अपनी जाति, धर्म और समाज के गौरव को, अपनी अनमोल धरोहर को हमें प्राणप्रण से बचाना है। हमारी साधना स्थली – विनोद स्थली ना बनने पायें, योग साधना पर भोगवादी प्रवृत्ति हावी ना होने पाए प्रदर्शन में दर्शन की उपेक्षा ना हो जाए, इसका ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है। चुनौती की विस्तृत पर्वत श्रंखलाओं को तोड़कर जर्जरित हुए तीर्थ क्षेत्रों को बचाने के प्रयास का मार्ग दुर्गम अवश्य है, असंभव नहीं। मंदिरों की सुरक्षा का माडल तैयार करके तीर्थों के मूल स्वरूप की आत्मा को बरकरार रखने के लिए भागीरथी प्रयासों की आवश्यकता है। आइये हम सभी पत्रकार समाज को साथ लेकर एक प्रगतिशील संगठन बनाकर निर्धारित नीति-रीति के अनुसार कार्य करके भारत के इतिहास की पुस्तक में जैन तीर्थों के यशस्वी अध्याय को जोड़ें। मेरा सभी पत्रकारों से कहना है :-

**एक दीप सा जलकर तुम तमका संहार करो**

**गूंगी वाणी भी गाएंगी, तुम खुद को झंकार करो,**

**तन जायेगी स्वयं प्रत्यंचा, अर्जुन सी टंकार करो,**

**कर्म क्षेत्र में करो समर्पण, तीर्थों का उद्धार करो।**







भा.दि.जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा आयोजित निबंध प्रतियोगिता उच्च शिक्षित वर्ग में प्रथम स्थान प्राप्त निबंध

## मानसिक शांति के अनूठे केन्द्र- जैन तीर्थ

- डॉ. निर्मल कुमार जैन, टीकमगढ़

### प्रस्तावना-

भारतीय जीवन पद्धति में जीनव जीने की कला और निज का कल्याण करना बहुत महत्वपूर्ण है। यह सम्पूर्ण धर्मों की अनूठी विरासत है। भारतीय दर्शनकारों ने मानव उत्थान की बात अपने-अपने ढंग से कही है। जबकि जैनदर्शन में जीव, कर्म, धर्म, अधर्म, आकाश, काल के साथ-साथ पुद्गल और जीव के संयोग वियोग से भेदविज्ञान की स्थिति तक पहुंचाकर आत्मोन्नति, आत्मशांति की बात कही गई है।

तीर्थकरों के अनुयायी स्वरूप जिनधर्म में वास्तविकता तर्क, प्रमाण आगम, सिद्धांत से संसारी जीव को मानवीय गुणों के आधार पर, तप, संयम की पराकाष्ठा से सिद्धत्व की श्रेणी में बिठाया है जो कि वास्तविक है। जहाँ संशय, कुतर्क, कुतप से रहित सम्यक्त्व सिद्धि की प्रेरणा है। ऐसा यह जिनधर्म उन आत्मजयी महापुरुषों को तीर्थकर नाम से संबोधित करता है। ये वो महान आत्मा हैं, जिन्होंने अनंत गुणों को धारण कर वीतरागता को ओढ़कर, सर्वज्ञता प्राप्त करके, सम्पूर्ण प्राणियों को हित का उपदेश दिया। ऐसी आत्मा के पहले ही तीर्थ शब्द लगा हो, वह मानसिक शांति का अनूठा केन्द्र क्यों नहीं होगा अर्थात् अवश्य ही है, था और रहेगा।

तीर्थ तरने व तारने के परम भाव से सम्पन्न होते हैं। ये आत्मसाधना, मानसिक पवित्रता और सर्व सिद्ध के साधन होते हैं। साधक निज साधना से आत्म शुद्धि करते हैं। आत्मशुद्धि के समस्त कारण और वे सम्पूर्ण स्थान जहाँ पर साधक की आत्मा परमात्मा बनती है। वे सब तीर्थ कहलाते हैं।

जहाँ भागते दूषण सारे, सुख साधन के धाम हैं।

पुण्यधरा वो होती निर्मल, शांति केन्द्र अभिराम हैं।।

धवलाकर आचार्य भगवन् कहते हैं कि धर्म का अर्थ सम्यक्त्व पूर्वक दर्शन ज्ञान चारित्र को धारण कर, जो संसार पार कराते हैं वह तीर्थ है।

धम्मो णाम सम्महसण-णाण-चारित्राणि।

एदेहि संसारसायं तरंति एदाणित्थं।।धवला ८/३

निर्मल नीति वाक्यामृत में तीर्थ के स्वरूप की व्याख्या की गयी है कि

गुण गरिमा की सीख जहाँ पर, कण-कण पूज्य महान है।

हरे विषमता सुख साधन शुभ, तीर्थ वही तरने के जो स्थान है।।

तीर्थों पर शुभ्रता के अनंत परिणामों और परमाणुओं का अनूठा एवं अनुपम पुंज होता है, जिससे साधक को मानसिक शांति, आत्मोपलब्धि और निज में रमण करने की क्षमता स्वमेव ही आती है। अनंत ऊर्जा के केन्द्र जिसमें शांति की साधना के प्रशांत परमाणु होते हैं। वहाँ पर श्रद्धा और सद्भावना से जाने पर मन में अलौकिक शांति मिलती है।

अतएव प्रत्येक धर्म और सम्प्रदायों में तीर्थों के महत्व का वर्णन है। प्रत्येक धर्म के अनुयायी स्व-स्व तीर्थों पर जाकर भक्ति पूर्वक अर्थ, काम की

भावना का परित्याग करके धर्म सहित मोक्ष प्राप्ति हेतु वंदना करते हैं और आत्मशांति का अनुभव करते हैं। श्रद्धा पूर्वक की गई यात्रा अनंत पुण्य संचयी होती है। पुण्य से सुख साधन और उससे शांति प्राप्त होती है। कहा भी है कि:-

यदा-यदा यान्ति नराहि तीर्थं, रून्धन्ति पापानि वदन्ति चैव।

अहो मनुष्या अधमा ही नित्यं, स्वयं समुत्पाद्य निहन्तु कामाः।।

तीर्थ क्षेत्र के दर्शन भावों की निर्मलता से सहित होकर करने से पूर्वबद्ध पाप व अशुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं। जिससे अनंत मानसिक शांति का अनुभव होता है।

मानव में जो।

मानवता भर दे।।

तीर्थभूमि वो।।

### तीर्थ शब्द का अर्थ-

‘तीर्थ’ शब्द तारने का द्योतक है। यह तृ प्लवनतरणयो से थक प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ पार करना, तैरना, वहना, तारना और अशुभ से बचना है।

तीर्थ शब्द की व्युत्पत्ति ”तरति पापं संसारं वाडने नास्मिन् वेति तीर्थमह्म जिसके द्वारा या जिसमें साधक संसार के जन्म-मरण चक्र को पार करता है। वह तीर्थ है। अर्थात् भव से पार उतारने वाला धर्म स्थान, भाव, विचार, संस्कृति, साधना और आत्मलीनता तीर्थ है।

”तरति संसारं महार्णवं येन तत् तीर्थमिति।”

तीर्थ शब्द की व्यापकता को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि :-

संसारार्थे-र-परस्य तरणे तीर्थमिष्यते।

चेष्टितं जिननाथानां तस्यो किस्तार्थं संकथा।।

जो इस अपार संसार-समुद्र से पार करे उसे तीर्थ कहते हैं। ऐसा तीर्थ जिनेन्द्र भगवान का चारित्र ही हो सकता है। वह तीर्थ पापों से निवृत्त, पुण्य का संचय, चारित्रिक विकास, आध्यात्मिक जागरण और मोक्ष प्राप्ति में सहभागी होता है। चित्त की निर्मलता ही तीर्थ स्वरूप होने की सीढ़ी है। तीर्थों में सर्वश्रेष्ठ तीर्थ अपना हृदय है। यह जितना निर्मल और निष्पाप होता है, शांति रूपी तीर्थ उतना ही आपके पास होगा। सम्पूर्ण तीर्थ हमारी पवित्रता के द्योतक हैं। यही पवित्रता शांति का सर्वश्रेष्ठ स्रोत है।

कर्म कलंक हरे नर निर्मल, आतमहित में पाग रहे।

निज विमल ध्यान सजे रहे, पुण्य पवित्र तीर्थ बने।।

तीर्थ से अभिप्राय आंतरिक पवित्रता, शुद्धता और निर्मलता से है। इस संसार में श्रेष्ठतम और सर्वहितकारी भावों से युक्त होना ही तीर्थ है।

सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रिय निग्रहः।

सर्वभूत दया तीर्थं सर्वज्ञापर्व मे वचः।।



इस संसार में पवित्र करने वाले भाव साधन सत्य, क्षमा, इन्द्रिय निग्रह, सरलता, सर्वभूतदया ही तीर्थ है। बोध पाहुड़ में आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी स्वामी महाराज कहते हैं कि-

**जंणिम्मलं सुधम्मं सम्मत्तं संजमं तवं णाणं ।**

**तं तित्थं जिण मग्गे हवेइ जदि संत भावेण ॥**

यदि शांत भाव से निर्मल धर्म, सम्यग्दर्शन, संयम, तप और ज्ञान धारण किये जाये तो जिनमार्ग में यही तीर्थ कहे गये हैं।

**अद्यनाशक ॥**

**शुभ शांति प्रदाता ॥**

**तीर्थ वंदना ॥**

जैनतीर्थ सर्वोदयी भावना की उत्कृष्ट पहल है। जहाँ पर उन गुणों को उकेरा जाता है जिसमें जीवन्तता निहित होती है। जिसमें विकास की उपादेयता होती है। व्यक्ति के व्यक्तित्व को निखारा जाता है। जहाँ क्षमा, दया, करुणा, संवेदना, सहनशीलता, धैर्य, सत्य, संयम, रक्षा, परोपकार, अहिंसा, अपरिग्रह, प्रेम, अस्तिक्य, अनुकम्पा, संवेग, सदाचरण और साहस जैसे गुणों से समन्वित किया जाता है। ऐसे परम स्थान, मानसिक शांति के अनूठे केन्द्र ही तो हैं।

परिणाम जहाँ पर उज्ज्वल हो उनमें सर्वोदयी भावना सदैव रहती हो उनकी सकारात्मक ऊर्जा का आभामण्डल तीर्थ क्षेत्रों पर मिलता है। इस आभामण्डल से व्यक्तियों में समतामयी आधार का संचार होता है। यह आधार जीवन को उन्नत, समृद्ध और श्रेष्ठता की ऊँचाईयाँ प्रदान करता है जहाँ पर विराधना की अपेक्षा साधना का लाभ, असंयम की अपेक्षा संयम का लाभ असंतोष की जगह संतोष का लाभ, मिथ्यात्स से सम्यक्त्व का लाभ और अमानवीयता से मानवीयता का लाभ प्राप्त होता हो वहाँ मानसिक शांति का केन्द्र अवश्य रहता है।

**तीर्थ का महत्व :-**

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के प्रभाव से कुछ स्थान विशेष बन जाते हैं। इन विशेष स्थानों में व्यक्ति के भावों और विचारों का प्रभाव पड़ता है। शुद्ध भावों की विशुद्ध वातावरण में शुद्धि की महक भर देती है। जिसमें शुचिता, शांति, सौहार्द, समन्वय, निर्भरता और निर्भयता जैसे गुणों का समावेश होता है। ऐसे ही स्थानों पर आत्मसाधक अपने भावों की विशुद्धि से स्वकल्याण का पथिक बन कर कल्याण के मार्ग का प्रकाशक होता है। सर्वत्यागी दिगम्बर श्रमण संत अपने अंतरंग परिणामों की विशुद्धि कर, कषायरंजित परिणामों का परित्याग करके तप की अग्नि में तपकर, कर्मकालिमा को पृथक्कर शुद्ध स्वर्ण सम आत्मोपलब्धि को पाते हैं। उनकी इस उपलब्धि से ही वे स्थान विशेष अतिशय, सिद्धक्षेत्र व सर्वोदय तीर्थ बन जाते हैं। वहाँ पर धर्म तीर्थ की स्थापना होती है और वे कालान्तर में मोक्ष तीर्थ भी बन जाते हैं। आचार्यों ने ऐसे तीर्थों को ही आत्मशांति के अनूठे केन्द्र कहे हैं।

श्री तीर्थ पान्थरजसा विरजी भवन्ति, तीर्थेषु विभ्रमणतो न भवे भ्रमन्ति ।  
तीर्थव्य यादिह नराः स्थिर संपदः स्युः, भवन्ति जगदीश मया श्रयन्तः ॥

ऐसे तीर्थभूमि की रज पवित्रता होती है। उस पर श्रद्धा रखकर तपादि कर व्यक्ति अपने कर्ममलों को नाश कर आत्मिक पुण्य अर्जित करता है। सिद्धत्व के भाव से निज को उन्नत करता है। परिग्रह का त्याग, कषाय से निवृत्ति, विकारों से तिलांजलि और रत्नत्रय की वृद्धि से संलग्न होता है। जहाँ पर अर्थ की कामना नहीं, परमार्थ की आराधना श्रमणत्व की उपासना और आत्मा की साधना होती है। ऐसे स्थानों पर अनंत शांति की उपलब्धि होती है।

**पुण्य ऋद्धि से है भरा, देता पावन धाम ।**

**निर्मल भाव से यात्रा तो, करता कर्म तमाम ॥**

ग्रन्थों में स्पष्ट लिखा है कि:-

**सिद्धक्षेत्र महातीर्थो पुराण पुरूषाधिते ।**

**कल्याण कलि पुण्ये ध्यान सिद्धि प्रजापते ॥**

सिद्धक्षेत्र महान तीर्थ होते हैं, महान आत्माओं के निर्वाण से कल्याणकारक पुण्यवर्द्धक, ध्यान-साधना से आत्मसिद्धिदायक होते हैं जो महानशांति प्रदायक होते हैं।

**तीर्थस्वरूप मनोवैज्ञानिक वृत्ति :-**

तीर्थों के संबंध में विचार करने पर हम जानते हैं कि महापुरुषों की जन्म, तप, निर्वाण भूमियाँ हमारे कर्मों के क्षय में निमित्त बनती हैं। जहाँ पर निधत्ति, निकाचित जैसे कर्मों का नाश हो जाता है। ऐसे स्थान सम्यग्दर्शन में निमित्त बनते हैं। तीर्थ शांति के शुभ केन्द्र हैं, जड़ मूल कर्म के नाशक। मन को परिवर्तित करते, श्रद्धा से हो आराधन ॥ तीर्थ यात्रा और निज साधना से तीर्थकर भवगंतों, आचार्य, साधुओं की साधना से निज आत्म चैतन्य विद्युत धारा से उन शिखरों को चार्ज किया है, जहाँ पर पवित्र भावनाओं के परमाणुओं का पुंज विराट सत्ता से समृद्ध रहा है। वहाँ पर सकारात्मक/धनात्मक और निर्वाणात्मक धनत्व शक्ति प्राप्त होती है। उस धरा/ तीर्थभूमि पर मन की शांति अपूर्व होती है।

**कर्मनाश तप किया अनोखा, अर्जितभाव विशुद्ध धारा ।**

**तन मन ज्योति ज्ञान मय जागी, वह तीर्थ शांति आधार ॥**

विकृति की प्रत्येक धारा को नाश करके आत्म स्वरूप की मंगल धारा में ले जाने वाले केन्द्र तीर्थ ही हैं। जैनदर्शन में तीर्थ की अवधारणा पवित्रता से है। जिन्होंने अपनी आत्मा को पवित्र कर लिया और मुक्ति लक्ष्मी को वरण कर लिया वे सब तीर्थ हैं। उनके द्वारा प्रवर्तित संदेश आत्मा की पवित्रता का मार्ग बताते हैं। जिस पर चलकर हमें अपूर्व मानसिक शांति मिलती है।

**दया भरें शांति करे जो, हरे अमंगल रूप ।**

**ऐसे पुण्य नियोग से, बनता तीर्थ स्वरूप ॥**

तीर्थ वन्दना करने से साधना करने वाले साधकों व सिद्ध जीवात्माओं की सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है। जिससे व्यक्ति के अन्दर आत्म जागृति, आत्म शांति और आत्मोपलब्धि प्राप्त होती है। मन का उपयोग सकारात्मक होने से मनोविकार का नाश होता है। मनोवृत्ति आत्मस्थ होती है। आत्मस्थ वृत्ति से मानसिक शांति मिलती है।



### मानसिक शांति के केन्द्र-

”संसार में रहकर जीव कर्मबद्ध ही रहता है। उस कर्मों से जीव राग-द्वेष से आबद्ध होता रहता है। जीव की मानसिक संचेतना सकारात्मक भावना से चार्ज हो, इसलिए वह धर्म का आचरण करता है। धर्माचरण के साथ-साथ तीर्थाटन भी करता है। तीर्थाटन से वह पवित्रता प्राप्त करता है। उसके भावों में निर्मलता का समावेश होता है। तीर्थों पर जाने से मनोवृत्ति निर्मल बनती है। मन पवित्र होता है। समत्व भावना का विकास होता है। इन्द्रिय विजय की कामना से स्वात्मोपलब्धि होती है। निज स्वभाव में रमण करने से मानसिक शांति मिलती है। यह स्थान परम पावन होने से परमात्माभाव की शिक्षा प्रदान करते हैं। इनके आश्रय से साधना की योग्यता का विकास होता है। स्वभाव में स्थित होते हैं। सदाचरण की भावना से भव का नाश होता है। यही प्रक्रिया आत्म शांति मानसिक शांति की है।

**भव्य जीव ने कर्म नाश के, पाया केवल ज्ञान महा।**

**पुण्यराशि जो विखर रही है, शांति के तो केन्द्र अहा।।**

**जहाँ मिली है आत्मसिद्धि तो, मानस ज्योति जगाता है।**

**मंगल होता तीर्थ जगत में, मन मंगल बन जाता है।।**

ऐसे मंगल मय तीर्थों, पर साम्यता, सद्भावना, सकारात्मकता मन परिवर्तन के साधन मिलते हैं, इसलिए तीर्थ मानसिक शांति के केन्द्र होते हैं।

**हृदय पवित्र होता जितना है, उसमें शांति मिले अपूर्व।**

**साधन साध्य मिले जीवन में, तीर्थ साधना होते पूर्ण।।**

### जैन तीर्थ-आत्मा की आवाज-

धर्म का प्रत्येक सम्प्रदाय तीर्थों की अवधारणा से युक्त है। हर सम्प्रदाय में अपने तीर्थ हैं। जो महापुरुष, घटना विशेष से संयुक्त हैं। वे बड़े भक्तिभाव से उनकी वन्दना करते हैं। और आत्मशांति प्राप्त करते हैं। तीर्थ स्थान पवित्रता, शांति और कल्याण के केन्द्र माने जाते हैं। जैन धर्म में तीर्थों का विशेष महत्व है। तीर्थयात्रा से पुण्य संचय, मुक्ति लाभ, शुचिता, शांति, तेजस्विता वैर-भाव का परित्याग जैसे अनेक गुणों की उपलब्धि होती है। जहाँ से सदाचरण की शिक्षा मिलती है। जहाँ पर कोलाहल से दूर एकान्त सुरम्य वातावरण से शांति की अमरता प्राप्त होती है। विशुद्ध आत्माओं की अनंत ऊर्जा तीर्थों पर आज भी विद्यमान है। जिससे तीर्थयात्री का मन रिचार्ज हो जाता है। जैसे सुगंधित वस्तु के कण किसी वस्तु में छू जाने से उसमें सुगंध आ जाती है बस ऐसा ही तीर्थ यात्रा करने से होता है। जिनके दर्शन से रोग, शोक, पीड़ा और आधि-व्याधियाँ पलायित हो जाती हैं। जिससे मन पवित्र होकर मानसिक शांति प्राप्त करते हैं।

कहा भी है कि-

**अस्य दर्शनमात्रेण कुष्ठाद्या नाशतां गताः।**

**रोगिणां सकलातकाः ऋद्धियापि ऋद्धि कांक्षिणाम्।।**

**पुत्र काक्षासांवतां चैव जाताहि चेलना प्रिया।**

**पुत्रोत्पत्ति र्धनोत्पत्ति राज्योत्पत्तिः शिवस्य च।।**

ऐहिक, लौकिक भौतिक सुखों के साथ पारमार्थिक सुख अर्थात् मोक्ष

प्राप्त कराने वाले तीर्थ ही हैं।

**तीर्थ कर्म नाशक रहे, मोक्ष परम रस धाम।**

**जगतारक ये तीर्थ है, हरे ताप संताप।।**

अतएव जैन तीर्थ परिग्रह से रहित, विशुद्ध चेतना के केन्द्र होते हैं। जहाँ पर साधकों के अनंतगुण रूप शुभ भाव की साधना समाहित होती है, जहाँ पर निजदर्शन से परमात्मा तत्व की उपासना पद्धति का ज्ञान होता है, जहाँ पर साधना की श्रेष्ठतम संकल्पना विद्यमान होती है। ऐसे तीर्थों पर मानसिक शांति सर्वत्र व्याप्त रहती है। अतः निसंकोच कहा जा सकता है कि मानसिक शांति के अनूठे केन्द्र-जैन तीर्थ हैं, रहे हैं और रहेंगे भी।

**मानव में मानवता भरते वही तीर्थ कहलाते हैं।**

**करुणा शांति दया को भरते, यही शास्त्र बतलाते हैं।।**

### उपसंहार-

जिन धर्म मानव जीवन की ज्योति है, तो यह सम्पूर्ण प्राणियों का हितैषी भी हैं। इसके प्रवर्तक तीर्थकर रहे हैं। जिन्होंने स्वयं आत्मोपलब्धि प्राप्त कर श्रेष्ठ राह पर चलने की प्रेरणा दी है। मानव में मानवीयता के गुणों को समाहित करने वाला यह जिनधर्म तीर्थभूमि धर्म, क्षमा, तीर्थ, संतोष तीर्थ, धर्म, भक्ति तीर्थ, जपतीर्थ, तपतीर्थ रत्नत्रयतीर्थ, ब्रह्म तीर्थ, इन्द्रिय निग्रह तीर्थ, समता तीर्थ, संयम तीर्थ और वात्सल्यतीर्थ से युक्त है। इसके माध्यम से जीव स्वयं का कल्याण तो करता ही है पर कल्याण को भी करता है। जिनधर्म कल्याण तीर्थ से युक्त है। जहाँ भक्त बनकर भगवान बना जाता है। जहाँ सद्भावना से विकास होता है। जहाँ सद्गुणों से तिरा जाता है। जहाँ पर आत्मा स्वयं परमात्मा बन जाती है। ऐसा तीर्थभूत धर्म मानसिक शांति का अनूठा केन्द्र है। ऐसे तीर्थभूत धर्म के धारक/साधक जहाँ बैठकर आत्मसाधना में लीन हो जाते हैं। वह भूमि/धरा पवित्रता से भरकर तीर्थरूप में जानी जाती है। तीर्थकरों की गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान और मोक्ष स्थली रूप भारत की वसुन्धरा तीर्थभूत ही है। ऐसे तीर्थ पर गुण ग्रहण कर मानव सबका हित करता है। न्याय नीति पर चलकर, आचरण की पवित्रता सहित आत्मोन्मुखी होना कल्याण के सोपान है। जिन्हें अपनाने की प्रेरणा तीर्थों से ही मिलती है। इसलिए यह निश्चित है कि मानसिक शांति के अनूठे केन्द्र जैन तीर्थ हैं।

**गुण गरिमा से निज जीवन का, होता सदा भला है।**

**तीर्थ प्रेरणा देते निर्मल, भव सागर पार कला है।।**

**क्षमा दया संतोष रहे तो, जीवन सुख मय होता है।**

**मानसिक शांति मिलतो इनसे, जिन तीर्थ यही संदेशा है।।**

इसलिए कहा जा सकता है कि:-

**शाश्वत शांति।।**

**तीर्थ से मिलती।।**

**भाव विमल।।**

**तीर्थक्षेत्र सुख शांति को देते, भव से पार कराते हैं।**

**कर्मनाश कर निजता को भरते, शिवरमणी उपजाते हैं।।**







03 मई 2022 अक्षय तृतीया विशेष : दान करने का महापर्व

## जैन परंपरा : अक्षय तृतीया से शुरू हुई थी आहारदान की परंपरा

डॉ. सुनील जैन 'संचय', ललितपुर

भारतीय संस्कृति में पर्व, त्योहारों और व्रतों का अपना एक अलग महत्व है। ये हमें हमारी सांस्कृतिक परंपरा से जहां जोड़ते हैं वहीं हमारे आत्मकल्याण में भी कार्यकारी होते हैं।

अक्षय तृतीया का दिन अपने आप में कई गाथाओं को समेटे हुए है। यह दिन अन्य दिनों से बहुत खास रहता है।

**अक्षय फल मिलता है :** अक्षय तृतीया या आखा तीज वैशाख मास में शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को कहते हैं। पौराणिक ग्रंथों के अनुसार इस दिन जो भी शुभ कार्य किये जाते हैं, उनका अक्षय फल मिलता है। इसी कारण इसे अक्षय तृतीया कहा जाता है। वैसे तो सभी बारह महीनों की शुक्ल पक्षीय तृतीया शुभ होती है, किंतु वैशाख माह की तिथि स्वयंसिद्ध मुहूर्तों में मानी गई है। हिन्दू परंपरा में अक्षय तृतीया का अत्यधिक महत्व है वहीं जैनधर्म में भी इसका खास महत्व है।

इस दिन जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव (आदिनाथ) ने राजा श्रेयांस के यहां इक्षु रस का आहार लिया था, जिस दिन तीर्थंकर ऋषभदेव का आहार हुआ था। उस दिन वैशाख शुक्ला तृतीया थी। उस दिन राजा श्रेयांस के यहां भोजन, अक्षीण (कभी खत्म न होने वाला) हो गया था। अतः आज भी श्रद्धालु इसे अक्षय तृतीया कहते हैं।

**दान की परंपरा की शुरुवात :**

जैन परम्परा के अनुसार अक्षय तृतीया के दिन ही दान की परंपरा की शुरुवात हुयी थी। जैन परंपरा में इस पर्व का बड़ा महत्व है। इसी कारण इसे विशेष श्रद्धाभाव से मनाया जाता है। जैनधर्म में दान का प्रवर्तन इसी तिथि से माना जाता है, क्योंकि इससे पूर्व दान की विधि किसी को मालूम नहीं थी। अतः अक्षय तृतीया के इस पावन पर्व को देश भर के जैन श्रद्धालु हर्षोल्लास व अपूर्व श्रद्धा भक्ति से मनाते हैं। इस दिन श्रद्धालुजन व्रत-उपवास रखते हैं। विशेष पूजा अर्चना करते हैं तथा दानादि प्रमुख रूप से देते हैं। जहाँ से इस परंपरा की शुरुआत हुयी ऐसे हस्तिनापुर में भी इस दिन विशाल आयोजन किये जाने की परंपरा है। इस दिन श्रद्धालु व्रत, उपवास रखकर इस पर्व के प्रति अपनी प्रगाढ़ आस्था दिखाते हैं।

शास्त्रों में बताया गया है कि अक्षय तृतीया के पावन दिन दान करने से बहुत अधिक महत्व होता है। दान करने का फल कई गुना अधिक मिलता है।

ऐसी मान्यता है कि इस दिन से प्रारम्भ किए गए कार्य अथवा इस दिन

को किए गए दान का कभी भी क्षय नहीं होता।

“अस्यां तिथौ क्षयमुपति हुतं न दत्तं।

तेनाक्षयेति कथिता मुनिभिस्तृतीया॥

उद्दिष्य दैवतपितृन्क्रियते मनुष्यैः।

तत् च अक्षयं भवति भारत सर्वमेव॥”

**जैन परंपरा में अक्षय तृतीया मनाए जाने का कथानक :** जैन परंपरा में अक्षय तृतीया मनाए जाने का जैन शास्त्रों में वर्णन किया गया है।

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विजयार्थ पर्वत से दक्षिण की ओर मध्य आर्यखण्ड में कुलकरो में अंतिम कुलकर नाभिराज हुए। उनके मरुदेवी नाम की पट्टरानी थी। रानी के गर्भ में जब जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव आये

तब गर्भकल्याणक उत्सव देवों ने बड़े ठाठ से मनाया और जन्म होने पर जन्म कल्याणक मनाया। फिर दीक्षा कल्याणक होने के बाद ऋषभदेव ने छः माह तक घोर तपस्या की। छः माह के बाद चर्या (आहार) विधि के लिए ऋषभदेव भगवान ने अनेक ग्राम नगर, शहर में पदविहार किया, किन्तु जनता व राजा लोगों को आहार की विधि मालूम न होने के कारण भगवान को धन, कन्या, पैसा, सवारी आदि अनेक वस्तु भेंट की। भगवान ने यह सब अंतराय का कारण जानकर

पुनः वन में पहुंच छः माह की तपश्चरण योग धारण कर लिया। अवधि पूर्ण होने के बाद पारणा करने के लिए चर्या मार्ग से ईर्यापथ शुद्धि करते हुए ग्राम, नगर में भ्रमण करते-करते कुरुजांगल नामक देश में पधारे। वहां हस्तिनापुर में कुरुवंश के शिरोमणि महाराज सोम राज्य करते थे। उनके श्रेयांस नाम का एक भाई था उसने सर्वार्थसिद्धि नामक स्थान से चयकर यहां जन्म लिया था।

एक दिन रात्रि के समय सोते हुए उसे रात्रि के आखिरी भाग में कुछ स्वप्न आये। उन स्वप्नों में मंदिर, कल्पवृक्ष, सिंह, वृषभ, चंद्र, सूर्य, समुद्र, आग, मंगल द्रव्य यह अपने राजमहल के समक्ष स्थित हैं ऐसा उस स्वप्न में देखा तदनंतर प्रभात बेला में उठकर उक्त स्वप्न अपने जेष्ठ भ्राता से कहे, तब ज्येष्ठ भ्राता सोमप्रभ ने अपने विद्वान पुरोहित को बुलाकर स्वप्नों का फल पूछा। पुरोहित ने जबाब दिया- हे राजन! आपके घर श्री ऋषभदेव भगवान पारणा के लिए पधरेंगे, इससे सबको आनंद हुआ।

इधर भगवान ऋषभदेव आहार (भोजन) हेतु ईर्या समितिपूर्वक





भ्रमण करते हुए उस नगर के राजमहल के सामने पधारे तब सिद्धार्थ नाम का कल्पवृक्ष ही मानो अपने सामने आया है, ऐसा सबको भास हुआ। राजा श्रेयांस को भगवान ऋषभदेव का श्रीमुख देखते ही उसी क्षण अपने पूर्वभव में श्रीमती वज्रसंघ की अवस्था में एक सरोवर के किनारे दो चारण मुनियों को आहार दिया था- उसका जाति स्मरण हो गया। अतः आहारदान की समस्त विधि जानकर श्री ऋषभदेव भगवान को तीन प्रदक्षिणा देकर पड़गाहन किया व भोजन गृह में ले गये।

'प्रथम दान विधि कर्ता' ऐसा वह दाता श्रेयांस राजा और उनकी धर्मपत्नी सुमतीदेवी व ज्येष्ठ बंधु सोमप्रभ राजा अपनी पत्नी आदि ने मिलकर श्री भगवान ऋषभदेव को सुवर्ण कलशों द्वारा रस का आहार दिया। तीन खण्डी (बंगाली तोल) इक्षुरस (गन्ना का रस) तो अंजुल में होकर निकल गया और दो खण्डी रस पेट में गया।

इस प्रकार भगवान ऋषभदेव की आहारचर्या निरन्तराय संपन्न हुई। इस कारण उसी वक्त स्वर्ग के देवों ने अत्यंत हर्षित होकर पंचाश्वर्य (रत्नवृष्टि, गंधोदक वृष्टि, देव दुंदुभि, बाजों का बजना व जय-जयकार शब्द होना) वृष्टि हुई और सभी ने मिलकर अत्यंत प्रसन्नता मनाई।

आहारचर्या करके वापस जाते हुए ऋषभदेव भगवान ने सब दाताओं को 'अक्षय दानस्तु' अर्थात् दान इसी प्रकार कायम रहे, इस आशय का आशीर्वाद दिया, यह आहार वैशाख सुदी तीज को सम्पन्न हुआ था। जब ऋषभदेव निरन्तराय आहार करके वापस विहार कर गए उसी समय से अक्षय तीज नाम का पुण्य दिवस (जैनधर्म के अनुसार) का शुभारंभ हुआ। इसको आखा तीज भी कहते हैं।

**अक्षय तृतीया व्रत, विधि एवं मंत्र:-** यह व्रत जैन परम्परा के अनुसार वैशाख सुदी तीज से प्रारम्भ होता है। उस दिन शुद्धतापूर्वक एकाशन (एक समय शुद्ध भोजन) करें या 2 उपवास या 3 एकाशन करें। इसकी विधि यह है कि व्रत की अवधि में प्रातः नैत्यिक क्रिया से निवृत्त होकर शुद्ध भावों से भगवान की दर्शन, स्तुति करें। पश्चात् भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा का अभिषेक, शांतिधारा, नित्य नियम पूजा भगवान आदि तीर्थंकर (ऋषभदेव) की पूजा एवं पंचकल्याणक का मण्डल जी मंडवाकर मण्डल जी की पूजा करें। तीनों काल (प्रातः, मध्याह्न, सायं) निम्नलिखित मंत्र जाप्य करें

एवं सामायिक करें-

**मंत्र – ओम् ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री आदिनाथतीर्थंकराय नमः स्वाहा।**

प्रातः सायं णमोकार मंत्र का शुद्धोच्चारण करते हुए जाप्य करें। व्रत

के समय में गृहादि समस्त क्रियाओं से दूर रहकर स्वाध्याय, भजन, कीर्तन आदि में समय यापन करें। व्रत अवधि में ब्रह्मचर्य से रहें। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पांच पापों का अणुव्रत रूप से त्याग करें। क्रोध, मान, माया, लोभ कषायों को शमन करें।

व्रत पूर्ण होने पर यथाशक्ति उद्यापन करें। मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका चतुर्विध संघ को चार प्रकार का दान दें। इस प्रकार शुद्धतापूर्वक

विधिवत रूप से व्रत करने से सर्व सुख की प्राप्ति होती है तथा साथ ही क्रम से अक्षय सुख अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति होती है।

आरोग्य जीवन बिताने के लिए भी यह उपयोगी है। संयम जीवनयापन करने के लिए इस प्रकार की धार्मिक क्रिया करने से मन को शान्त, विचारों में शुद्धता, धार्मिक प्रवृत्तियों में रुचि और कर्मों को काटने में सहयोग मिलता है।

**अमिट हो गयी हस्तिनापुर की पहचान :** बैसाख माह की शुक्ल पक्ष तृतीया का जैन धर्म में विशेष महत्व है। हस्तिनापुर का इस तिथि से विशेष संबंध है। अक्षय तृतीया के दिन जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने निराहार तपस्या के बाद प्रथम बार यहीं पर आहार ग्रहण किया था और उसी दिन से हस्तिनापुर की पहचान अमिट हो गई।

**धर्मतीर्थ और दानतीर्थ :** भगवान ऋषभदेव धर्मतीर्थ के प्रवर्तक प्रथम तीर्थंकर थे तो राजा श्रेयांस दानतीर्थ के प्रवर्तक प्रथम दातार थे। इस हस्तिनापुर नगर से ही दानतीर्थ का प्रवर्तन हुआ। अतः यह नगर उसी समय से पुण्यभूमि बन गई है। भरतक्षेत्र में दान देने की प्रथा उस समय से प्रचलित हुई और दान देने की विधि भी राजकुमार श्रेयांस से ही प्रगट हुई। दान की इस विधि से भरत आदि राजाओं को और देवों को बड़ा आश्चर्य हुआ। देवों ने आकर बड़े आदर से राजा श्रेयांस की पूजा की। महाराज भरत ने भी श्रेयांस के मुख से सारी बातों को सुनकर परम प्रीति को प्राप्त किया और राजा सोमप्रभ तथा श्रेयांस कुमार का खुब सम्मान किया। इसी कारण इस अक्षय तृतीया का जैन धर्म में विशेष धार्मिक महत्व समझा जाता है।





- शैलेन्द्र कुमार जैन, लखनऊ

विश्वसंभवस" आदि वचन पाये जाते हैं। अर्हन् शब्द जैन धर्म के अधिनायक भगवान ऋषभदेव को ही सूचित करता है। इसी प्रकार पौराणिक साहित्य में लिंगपुराण (47/20-23), ब्रम्हाण्डपुराण (1/2/14), शिवपुराण (37/57) एवं विष्णुपुराण (2/1/27-28) में चक्रवर्ती भरत (जिनके नाम पर यह देश अजनाभवर्ष से भारतवर्ष हुआ) के पिता के रूप में भी ऋषभदेव का उल्लेख मिलता है। भागवतपुराण पंचम स्कन्ध से भी इसका समर्थन होता है। ए0एस0आई0 के पूर्व महानिदेशक डॉ. मुनीश चन्द्र जोशी ने (ऋषभ सौरभ, 92, पृ0 64) अपने लेख में लिखा है कि -भारतीय परम्पराओं के अनुसार ऋषभनाथ एक प्रारम्भिक राजवंश में उदभूत युगपुरुष थे उनका सम्बन्ध अयोध्या नामक नगर से था। अर्थववेद में हिरण्यमय कोश से आवृत्त देवताओं की नगरी अयोध्या की महिमा वर्णित है। जैन परम्परानुसार ऋषभदेव जब माता के गर्भ में आये तब हिरण्य की वर्षा हुई थी और उसी समय अयोध्या हिरण्यमय कोष से आवृत्त हो गयी। गरूड पुराण में सात मोक्षदायनी पुरियों में प्रथम माना है। रामायण में उल्लेख है कि बहुत वर्षों से जनशून्य (शूनी पड़ी) रमणीक अयोध्या नगरी राजा ऋषभ के समय बसी। ("अयोध्यापि पुरी रम्या शुन्या वर्षगणान् बहूना ऋषभं प्राप्य राजानं निवासमुपयास्यति।")<sup>16</sup> इस नगरी का निर्माण स्वयं मनु ने कराया था। जैन परम्परा में भी अयोध्या आदि तीर्थ कहा गया है एवं इसका निर्माण मनु (नाभिराय) ने कराया था। आचार्य यतिवृषभ ने तिलोपपण्णत्ति में आदि गाथाओं द्वारा सचित किया है कि अयोध्या नगरी में





ऋषभदेव का जन्म हुआ था। अजितनाथ, अभिनन्दनाथ, सुमतिनाथ और अनन्तनाथ जिनेश्वरादि पाँच तीर्थंकरों का आविर्भाव अयोध्या में ही हुआ था। जैन मान्यता के अनुसार अयोध्या एक शाश्वत तीर्थ है। अंतिम मनु नाभिराय अपनी संगिनी मरूदेवी के साथ यही निवास करते थे। और यही उनके पुत्र आदितीर्थंकर ऋषभदेव का जन्म हुआ था जिनके अपर नाम आदि देव, आदिनाथ, आदि पुरुष, स्वयंभू, प्रजापति, पुरुदेव कश्यप और इक्ष्वाकु थे। मनु पुत्र ऋषभदेव, इक्ष्वाकु ही इस नगर के प्रथम नरेश थे, और इसी नगर में उन्होंने मानवों को लोक धर्म एवं आत्म धर्म का सर्वप्रथम उपदेश दिया इनके उपरान्त हुए अन्य 23 तीर्थंकरों में से 22 उन्हीं के इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न हुए थे, जिनमें दूसरे अजितनाथ, चौथे अभिनन्दननाथ, पाँचवे सुमतिनाथ और चौदहवें अनन्तनाथ का जन्म भी अयोध्या में ही हुआ था। इस प्रकार अयोध्या पाँच तीर्थंकरों की जन्मभूमि रही है।

भगवान ऋषभदेव के निर्वाणोपलक्ष में भरत चक्रवर्ती ने अयोध्या में एक उत्तुंग सिंह-निषद्या निर्माण कराई थी तथा नगर के चारों महाद्वारों पर 24 तीर्थंकरों की निज-निज शरीर प्रमाण प्रतिमाएँ स्थापित की तथा स्तूप एवं मूर्ति कला का विकास भी इस नगर में सर्वप्रथम विकसित हुआ।<sup>17</sup> भरत के उपरान्त सुभौम, सगर, मधवा आदि कई अन्य चक्रवर्ती सम्राट भी अयोध्या में हुए और महाराज रामचन्द्र एवं लक्ष्मण जैसे शलाकापुरुषों को जन्म देने का श्रेय भी अयोध्या को ही है। रामचन्द्र दीक्षा लेने के बाद पद्ममुनि के नाम से प्रसिद्ध हुए और अर्हत परमेश्वर बनकर मोक्ष गये। महारानी सीता की गणना जैन परम्परा की सोलह आदर्श महासतियों में है। यज्ञों में पशुबलि के प्रश्न को लेकर नारद और पर्वत के बीच राजा वसु की राजसभा में होने वाला विवाद भी एक अनुश्रुति के अनुसार अयोध्या में ही हुआ था। राजनर्तकी बुद्धिषेणा और प्रीतंकर एवं विचित्रमति नामक मुनियों की कथा का तथा अन्य अनेक जैन पुराण-कथाओं का घटनास्थल यह नगर रहा। अन्तिम तीर्थंकर महावीर अपने एक पूर्व भव में, तीर्थंकर



श्रीवास्तव कायस्थ राजाओं का शासन था, जिन्होंने सैयद सालार मसउद गाजी को, जो अवध प्रान्त पर आक्रमण करने वाला संभवतया सर्व प्रथम मुसलमान था, वीरता पूर्वक लड़कर खदेड़ भगाया था। सन् 1194 ई. के लगभग दिल्ली विजेता मुहम्मद गोरी के भाई मखदमशाह जूरन गोरी ने

अयोध्या पर आक्रमण किया और ऋषभदेव जन्मस्थान के विशाल जिनमंदिर को ध्वस्त करके उसके स्थान पर मसजिद बना दी, किन्तु स्वयं भी युद्ध में मारा गया और उसी स्थान पर दफनाया गया जो अब शाहजूरन का टीला कहलाता है। उसी टीले पर, मसजिद के पीछे की ओर, आदिनाथ का एक छोटा सा जिनमंदिर तो थोड़े समय पश्चात ही पुनः बन गया किन्तु चिरकाल तक उसका चढ़ावा अयोध्या के बकसरिया टोले में रहने वाले शाहजूरन के वंशज ही लेते हैं। ऐसी भी किंवदन्ति जनश्रुत होती है कि अवध के बादशाह नसीरुद्दीन हैदर के समय में मणिपर्वत से नंदयुग का एक शिलालेख प्राप्त हुआ था, जो अब अप्राप्त है। मणिपर्वत के दक्षिण दिशा-स्थित एक कृषिक्षेत्र (खेत) से अयोध्या के शुंगकालीन प्रथम शती ई.पू. के राजा धनदेव का संस्कृत शिलालेख भी मिला है। सम्भवतः एतद्विषयक एक अभिलेख अयोध्या के रामकथा-संग्रहालय या डॉ. रा.मा.लो. अवध वि.वि. फैजाबाद में सुरक्षित है। सन् 1865 में अयोध्या के सन्निकट प्राचीन सिक्कों का एक





दफ़ीना मिला था, जिसमें तीन प्रकार के प्राचीन सिक्के थे, जो स्थानीय नरेशों के प्रतीक होते हैं। दूसरी पहली ई.पू. के सिक्कों में एक ओर वृषभ या हस्ती, दूसरी तरफ चैत्यवृक्ष, स्वास्तिक, नन्द्यावर्तादि आदि जैन चिन्ह हैं। तीसरी कोटी के सिक्के दूसरी-चौथी सदी ई.वी. के स्थानीय मित्र वंशी राजाओं के प्रतीक होते हैं। ये भी वृषभ, नन्दिपादादि प्रतीकों से समलंकृत थे। मध्यकाल के प्रायः दसवी सदी से लेकर 19वीं सदी के कई जैन प्रतिमा-लेख, शिलालेख भी उपलब्ध हुये थे। चौथी-पाँचवी सदी ई.पू. नन्दों के बाद अयोध्या इक्ष्वाकुवंशी चन्द्रगुप्त मौर्य के अधिकार में थी। उसी काल के वहाँ हनुमानगढ़ी के पास खुले क्षेत्र के खुदाई में प्राप्त चौथी सदी ईसा पूर्व की केवली जिन की मूर्ति (भारत में प्राप्त प्राचीनतम जिन प्रतिमा) एवं सिक्को (2 सदी ई.पू.) पर वृषभ, हाथी के चिन्ह और राजाओं के नाम में (धनदेव, विशाखदेव) देव शब्द का प्रयोग और वृषभ राज चिन्ह (जो सत्ता परिवर्तन पर भी नहीं बदलता था) ऋषभदेव की ऐतिहासिकता का समर्थन करते हैं। सन् 1330 ई. के लगभग जैनाचार्य जिनप्रभसूर ने दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक से फरमान प्राप्त करके संघ सहित अयोध्या तीर्थ की यात्रा की थी। उन्होंने अपने विविध तीर्थकल्प के अन्तर्गत अयोध्यापुरीकल्प में लिखा है कि उस समय वहाँ जन्म लेने वाले पाँचों तीर्थकरों के मंदिरों के अतिरिक्त, राजा नाभिराय (ऋषभदेव के पिता) का मंदिर, पार्श्वनाथ की बाड़ी, चक्रेश्वरी (ऋषभदेव की यक्षि) की रत्नमयी प्रतिमा, इसके संगी गोमुख यक्ष की मूर्ति, सीताकुंड, सहस्रधारा, स्वर्गद्वार आदि जैनधर्मायतन विद्यमान थे, तथा नगर के प्राकार पर मत्तुंगयंद यक्ष का निवास था, जिसके आगे उस समय भी हाथी नहीं आते थे, जो आते भी थे वे तत्काल-मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे। 1528 ई. में मुगल बादशाह बाबर ने अयोध्या पर आक्रमण करा और अपने सिपेसालार मीर बाकी के द्वारा रामकोट में स्थित रामजन्मस्थान के मंदिर को तोड़ कर मसजिद बनाई और उपरोक्त जैन मंदिरों में

से भी कुछ को तुड़वाया। अकबर व जहाँगीर के शासनकाल में उनकी तटस्थता के कारण या मौन स्वीकृत के चलते जैन एवं वैष्णव मठ एवं मन्दिर निर्मित होने लगे आगे औरंगजेब ने उन्हें भी तुड़वा दिये। अतैव अधिकांश वैष्णव और जैन परम्परा के मठ एवं मन्दिर अवध के नवाबों और ब्रिटिश शासनकाल में बने हैं। नगर के मुहल्ला कटरा में एक टोंक में एक जैन महात्मा के चरण चिन्ह स्थापित हैं, जिन पर अंकित लेख से विदित होना है कि वहाँ शीतल नाम के दिगम्बर जैन मुनिराज ने समाधिभरण किया था, जिसकी स्मृति में ब्रह्मचारी मानसिंह के पुत्र ने वैशाख सुदी 8 सोमवार, संवत् 1704 के उक्त चरण चिन्हों को प्रतिष्ठापित किया था। 1965 में आचार्यरत्न देशभूषण जी महाराज ने रानी का बाग रायगंज मोहल्ले में 31 फुट ऊँची खड्गुासन मनोज्ञ प्रतिमा एक बड़े मन्दिर में स्थपित करायी। वर्तमान में जैन धर्म की सर्वोच्च साध्वी गणिनी प्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माता जी ने शाश्वत तीर्थ अयोध्या में सन् 1993 से 1995 के मध्य बड़ी मूर्ति रायगंज के नाम से विख्यात उपरोक्त जैन मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया एवं इसी मन्दिर परिसर में 'समवसरण मन्दिर' और 'त्रिकाल चैबौसी मन्दिर' का निर्माण करवाकर इस तीर्थ का विश्वव्यापी प्रचार किया। 1995 में उत्तर प्रदेश शासन के सहयोग से ऋषभदेव राजकीय उद्यान में 21 फुट पदमासन की प्रतिमा का निर्माण कराया। इसी क्रम में 2019 में आर्यिका ज्ञानमती माताजी की मंगल प्रेरणा एवं आर्यिका चन्दनामती माता जी के कुशल मार्गदर्शन में स्वस्ति श्री रवीन्द्रकीर्ति जी ने अयोध्या में पाँच तीर्थकर भगवन्तों-भगवान् आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ एवं अनन्तनाथ की जन्म कल्याणक भूमियों पर बने अत्यन्त प्राचीन जिन मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराकर वहाँ पर भव्य जिनालयों की स्थापना एवं उनकी अभूतपूर्व पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराई।



## तपस्या का फल

-डॉ. नरेन्द्रकुमार जैन, सनावद (म.प्र.)

संसार में अनेक तपस्वी इच्छापूर्ति के लिए तपस्या करते हैं। कोई लौकिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए तप करता है तो कोई पारलौकिक सुख और कर्म बंधनों से मुक्ति के लिए तप करता है। प्रमुख जैन सिद्धान्त ग्रंथ धवला में कहा है कि **इच्छा निरोधस्तपः** अर्थात् इच्छाओं का निरोध ही तप है। कर्मों का क्षय करने के लिए जो कार्य किया जाता है उसे भी तप कहते हैं। यदि और सरल शब्दों में समझना हो तो- अपनी पीड़ा को सह लेना और दूसरों को पीड़ा न पहुँचाना तपस्या का फल है।

जगत की दृष्टि से देखें तो राजस, तामसिक और सात्विक तप में संलग्न व्यक्ति दिखाई देते हैं। राजागण राज्य की सीमाओं को बढ़ाने के लिए राजस, तामसिक व्यक्ति विकृत भावना की पूर्ति के लिए तामसिक और मोक्ष की प्राप्ति के लिए व्यक्ति सात्विक तप करते हैं। सात्विक तप ही सच्चे सुख का साधन बनता है, इससे जन्म, मृत्यु से छुटकारा मिलकर मोक्ष की प्राप्ति होती है अतः इसे यथार्थ तप कहा गया है। तप करते समय भावों या विचारों का बहुत महत्व है। एक छोटा सा विचार भी लाखों वर्षों तक मोक्ष में जाने से रोक देता

है। जैन पौराणिक कथाओं के अनुसार जरासंध से युद्ध के दौरान कौरवों की मृत्यु के बाद राजभोग के उपरान्त पाँचों पाण्डव जब शत्रुंजय पर्वत पर तपस्यारत थे तब दुर्योधन के भान्जे ने द्वेषवश लोहे के कड़े बनवाकर गर्म करके उन्हें पहना दिये। युधिष्ठिर सहित पाँचों पाण्डव शरीर की नश्वरता का चिंतवन करते हुए शरीर के प्रति निर्ममत्व भाव होकर आत्मा के कल्याण में अग्रसर हो गये। युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन के भावों में पूर्व एकाग्रता आ गई अतः उन्होंने लक्ष्य (मोक्ष) प्राप्त कर लिया। नकुल और सहदेव के मन में भाईयों को देखकर किंचिन्नाग्र आ गया। सांसारिक जीवन के एक विचार ने उनके मोक्ष प्राप्ति के पुरुषार्थ को कुछ वर्षों (सागरों पर्यन्त) तक मोक्ष जाने से रोककर सर्वार्थसिद्धि (स्वर्ग के उत्तम सुखों) के लिए भेज दिया। जहाँ से निकलकर मनुष्य के रूप में पुनः जन्म लेकर तपस्या से कर्मों का क्षय कर मोक्ष का वरण करेंगे। अतः तप के फल को प्राप्त करना चाहिए तभी तपस्या सार्थक है।







## प्राकृत भाषा के प्रति जागरूकता ही है, श्रुत-संरक्षण का उपाय

- डॉ. अरिहन्त कुमार जैन, बेंगलुरु

चौबीस तीर्थकरों की सुदीर्घ परंपरा श्रुत-परंपरा की अनुगामी रही है। भगवान् महावीर द्वारा उपदेशित एवं गणधर द्वारा गुंफित प्राकृतमय द्वादशांग वाणी तथा अन्य अनेक आगम शास्त्र हमारे परम सौभाग्य से आज हमें उपलब्ध है। भगवान् महावीर निर्वाण के लगभग ५०० वर्ष बाद हमारे उत्तरवर्ती महान् आचार्यों ने श्रुत (मौखिक) परंपरा के माध्यम से उसे अक्षुण्ण रखा एवं सतत प्रवहमान कर हम सभी के लिए आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त किया। समय के साथ श्रमणाचार्यों ने जब यह अनुभव किया कि काल के प्रभाव से अब स्मरण शक्ति उत्तरोत्तर क्षीण होती जा रही है, अतः श्रुतज्ञान की परम्परा को सहस्राब्दियों तक अबाध रूप से सुरक्षित करने के लिए इस श्रुतज्ञान की धारा को लिपिबद्ध होना आवश्यक है। तब वाचनाओं आदि के माध्यम से इस महत्त्वपूर्ण कार्य को कार्यान्वित किया गया। इसी क्रम में भगवान् महावीर के निर्वाण के ६८३ वर्ष बाद आचार्य धरसेन स्वामी, जो कि षट्खंडागम के सम्पूर्ण विषय के ज्ञाता थे, उस समय वे सौराष्ट्र देश में गिरि नगर की गुफा में साधनरत्न थे। वे अष्टांग निमित्तों के पारगामी एवं प्रवचन-वत्सल आचार्य थे। उन्हें इस श्रुत-ज्ञान के संरक्षण की चिंता हुई। अवशिष्ट अंग-श्रुत के विच्छेद की आशंका से उसे संरक्षित रखने हेतु, उन्होंने महिमा नाम की नगरी में सम्मिलित दक्षिणापथ के आचार्यों के पास एक पत्र भेजा, जिसमें उन्होंने इच्छा व्यक्त की, कि योग्य शिष्य उनके पास आकर षट्खंडागम का ज्ञान ग्रहण करें।



दक्षिण देश के आचार्य संघ ने पत्र का आशय समझकर शास्त्रों के अर्थ ग्रहण और धारण में समर्थ; वंश, कुल, शील आदि सभी गुणों में उत्तम तथा विविध विद्याओं एवं कलाओं में पारंगत दो मुनियों को आंध्रप्रदेश की वेणा नदी के तट से, आचार्य धरसेन के पास भेजा। इन दोनों तेजस्वी मुनियों ने लगातार पद्यात्रा करके गंतव्य स्थान पर पहुँचकर आचार्य धरसेन की श्रद्धापूर्वक तीन प्रदक्षिणाएँ कीं और उनके चरणों में सविनय नमोऽस्तु किया। आचार्य धरसेन ने उन दोनों शिष्यों की विविध प्रकार की परीक्षाएँ लीं, और योग्य सिद्ध होने पर उन्हें स्वयं में सुरक्षित षट्खंडागम सिद्धान्त की शिक्षा दी। इन दोनों तेजस्वी शिष्यों का नाम मुनि पुष्पदंत और भूतबलि रखा।

आषाढ शुक्ल एकादशी के दिन ज्योंही इनकी शिक्षा पूर्ण हुई, वर्षाकाल के समीप आ जाने पर आचार्य धरसेन ने इन दोनों मुनिराजों को उसी दिन अपने पास से विदा कर दिया और स्वयं निःशल्य हो साधना में लीन हो गए। इन दोनों शिष्यों ने गुरु की आज्ञा अनुलंघनीय मानकर वहाँ से प्रस्थान किया और अंकलेश्वर में चातुर्मास किया। आचार्य पुष्पदन्त और आचार्य भूतबलि ने, आचार्य धरसेन की सैद्धान्तिक देशना को श्रुत ज्ञान द्वारा स्मरण कर, उसे 'षट्खंडागम' नामक महान् परमागम के रूप में प्राकृत भाषा में

लिपिबद्ध कर, ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी के दिन पूर्ण किया। अतः यह दिवस शास्त्र उन्नयन एवं श्रुत संरक्षण के महापर्व - श्रुतपंचमी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। कुछ वर्षों पूर्व से हम इसे "प्राकृत भाषा दिवस" के रूप में भी मनाते आ रहे हैं।



श्रुतज्ञान की आराधना का यह महान् पर्व हमें वीतरागी संतों की वाणी, आराधना और प्रभावना का सन्देश देता है। इस दिवस पर शास्त्रों की देखभाल, शास्त्र भण्डार की सफाई, शास्त्रों की शोभायात्रा के साथ उनकी विशेष पूजा होती है, तथा साथ ही भविष्य की दृष्टि से अप्रकाशित प्राचीन ग्रंथों के प्रकाशन एवं प्राचीन पांडुलिपि के वैज्ञानिक विधि से संरक्षण हेतु योजनायें क्रियान्वित होती हैं। यदि भविष्य को देखते हुए गंभीर विचार किया जाये तो प्रश्न उठता है कि क्या मात्र यही कर्तव्य श्रुत की रक्षा के लिए पर्याप्त हैं! जिस प्रकार स्कूल की किताबों को मात्र सहेजकर ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता, पास होने के लिए उनका अध्ययन-स्वाध्याय करना भी आवश्यक होता है, उसी प्रकार श्रुत की रक्षा भी सम्पूर्ण रूप से तभी संभव है जब हम उनकी देखभाल के साथ-साथ उनका पारायण भी करें। यदि उपर्युक्त सभी कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए हम इनके नियमित स्वाध्याय पर भी ध्यान केन्द्रित करें, तो हमारे आत्मकल्याण के साथ-साथ इस श्रुत धारा को युगों तक सुरक्षित रखने में हम अपनी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। यह भी हमारी उनके प्रति सम्यक् भक्ति का ही

अंग है।

मुख्यतः जैन आगम प्राकृत भाषा में लिपिबद्ध हैं। आस के वचनादि से होने वाले अर्थ ज्ञान को आगम कहते हैं। समान्यतया हमारी इन पर अपार श्रद्धा तो होती है, परंतु भाषा की अनभिज्ञता, हमें इन्हें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित नहीं करती। अतः आगमों का सम्यक् अध्ययन करना है, तो प्राकृत भाषा को सीखना भी आवश्यक है। प्राकृत भाषा एवं साहित्य के वरिष्ठ विद्वान् प्रो. कमलचंद सोगानी अपने लेख 'प्राकृत भाषा पढ़ना ज़रूरी क्यों!' में लिखते हैं— क्या यह धारणा युक्तिसंगत नहीं है कि आगम की भाषा प्राकृत को पढ़ना-पढ़ाना महावीर की भक्ति है? यदि श्रमण महावीर के अनुयायी महावीर की भाषा के महत्त्व को नहीं समझते हैं तो अनुयायी होने का क्या अर्थ है? क्या इससे श्रमण संस्कृति का आधार नहीं डगमगायेगा? प्राकृत साहित्य बहुत विशाल है, उसका क्या होगा? अतः यदि हम प्राकृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन को महत्त्वपूर्ण माने तो महावीर वाणी बचेगी। प्राकृत भाषा का विस्मरण जैन संस्कृति का विस्मरण है, उसके सारगर्भित अस्तित्व का मिटना है। इतना ही नहीं प्राकृत भाषा के अभाव में जैन संस्कृति के विशिष्ट एवं विलक्षण मूल्यों से भारत ही नहीं विश्व समुदाय वंचित हो जायेगा।



ओशो (आचार्य रजनीश) के प्रवचन संग्रह “महावीर मेरी दृष्टि में” उन्होंने एक दृष्टांत दिया, जिसने आत्ममंथन करने पर मजबूर कर दिया। उन्होंने कहा कि “एक आदमी एक घर में शब्दकोश (डिक्शनरी) बेचने के लिए गया है। घर की गृहिणी ने उसे टालने की दृष्टि से कहा है कि “शब्दकोश हमारे घर में है, वो देखिये - सामने टेबल पर रखा है। हमें इसकी जरूरत नहीं है”। लेकिन उस आदमी ने बहुत ही आत्मविश्वास से कहा कि “देवी जी, क्षमा करें ! वह शब्दकोश नहीं है, वह कोई धर्मग्रंथ मालूम होता है। स्त्री तो बहुत परेशान हुई क्योंकि वह धर्मग्रंथ ही था ! उसे इस बात का आश्चर्य था कि वह व्यक्ति दूर से टेबल पर रखी किताब को कैसे पहचान गया ? तो उस गृहिणी ने पूछा, आप कैसे जान गए कि वह धर्मग्रंथ है? उसने कहा- “उस पर जमी हुई धूल बता रही है। क्योंकि शब्दकोश पर धूल नहीं जमती। रोज उसे कोई खोलता है, देखता है, पढ़ता है। उसका उपयोग होता है। उस टेबल पर रखी पुस्तक पर इतनी धूल जमी हुई है, तो निश्चित ही कहा जा सकता है कि वह धर्मग्रंथ है !” वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह कितना बड़ा कटाक्ष है। यहाँ धूल का अर्थ मात्र उस धर्मग्रंथ पर लगे रजकण ही नहीं, बल्कि हमारे चित्त पर लगी ज्ञानावरण कर्म की धूल भी है, कि सौभाग्य से ये धर्मग्रंथ सहज उपलब्ध होते हुए भी, हम उनके महत्त्व को समझ नहीं पा रहे।

हमारी प्राचीन महान् शैक्षिक प्रणाली इस हद तक श्रवण-आधारित रही है कि विश्व की प्राचीनतम ज्ञान धरोहर वेदों का नाम ही 'श्रुति' पड़ गया क्योंकि श्रुतियों का ज्ञान लिखकर नहीं वरन् सुनकर तथा कंठस्थ कर, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हृदयांतरित होता रहा। आधुनिक काल में भी 'सुबोपलि' (सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना) की अवधारणा के अनुसार लिखना सबसे अंतिम क्रिया है। वेदों ने भी अपने लिपिबद्ध किए जाने तक हजारों सालों का सफर श्रुति के माध्यम से ही पूरा किया। आज भी भारत में कई विद्यालय एवं पाठशालाएँ ऐसी हैं, जिनमें विद्यार्थी श्रुति-परंपरा से ही वेदों का अध्ययन करते हैं, और सुरक्षित रूप से इस परंपरा को बनाए हुए हैं।

आज हमें भी प्राकृतभाषा के प्रति जागरूक होकर अपनी प्राचीन श्रुतपरंपरा को इसी प्रकार पुनर्स्थापित करके श्रुत संरक्षण के जीवंत उपाय करने की आवश्यकता है। प्रो. सोगानी कहते हैं – “प्राकृत के प्रति अनभिज्ञता से उसका साहित्य किसी म्यूजियम को ही सुशोभित करेगा, किन्तु संस्कृति को नहीं। प्राकृत विज्ञ होने से ही महावीर की संस्कृति बचेगी”। सामान्य जन के लिए प्राकृत विज्ञ ही लोकभाषा हिन्दी व अंग्रेजी एवं अन्य विदेशी भाषाओं में अनुवाद के माध्यम से मूल तक पहुँचाने में सहायक होता है और प्राकृत पढ़ने की प्रेरणा देता है। प्राकृत विज्ञों के कारण ही आज इनके अनुवाद लगभग हर प्रचलित भाषा में उपलब्ध हैं, परन्तु मूल की रक्षा भगवान् महावीर की प्राकृत वाणी को ग्रहण किए बिना संभव नहीं। प्राकृत को वर्तमान की प्रासंगिकता समझ के नहीं, बल्कि भगवान् महावीर की वाणी जानकर आवश्यक रूप में पढ़ें।

जैन धर्म में सबसे ज्यादा महत्त्व देव, शास्त्र और गुरु का है। शास्त्र अर्थात् जिनवाणी माँ। आज हमें जो कुछ ज्ञान है, वो सब जिनवाणी के कारण है। माँ बच्चे को सुलाने के लिए लोरी सुनाती है, पर जिनवाणी माँ हमें जगाती हैं और संसार रूप भवसागर से पार करना सिखाती हैं। आज हमें प्राकृतमय

जिनवाणी माँ के संरक्षण के लिए जागृत होने की आवश्यकता है। हमारे आगमों की प्राकृत गाथाएँ अपने आप में आत्मकल्याण का मंत्र हैं, जो गागर में सागर को चरितार्थ करती हैं। प्रारम्भिक रूप में हमें भले ही भाषा का व्याकरणिय ज्ञान धीरे-धीरे एवं समय के साथ हो, परन्तु श्रुत की रक्षा हेतु हमें यह मूल प्राकृत कंठस्थ होना बहुत जरूरी है, ठीक उसी तरह, जिस तरह वेद श्रुति की परंपरा आज भी विद्यमान है। जिस प्रकार बच्चों को सर्वप्रथम हम प्राकृत का णमोकार महामंत्र सिखाते हैं, उसी प्रकार बच्चों की धार्मिक पाठशालाओं में प्राथमिक रूप से हमें बच्चों को द्वादशांगी एवं अन्य आगमों के नाम, पूज्य प्राचीन आचार्यों के नाम एवं प्राकृत गाथाओं आदि को कंठस्थ कराने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि बच्चों की स्मरण शक्ति बड़ों से अधिक होती है। अगर इस श्रुत रूपी बीज को हमने बच्चों में बो दिया तो बच्चों में संस्कार के साथ जिनवाणी भी हृदयंगम होगी तथा जीवंत बनी रहेगी। विद्वानों के साथ मिलकर समाज को भी प्राथमिकता के साथ इस संबंध में कार्य करना चाहिए। जब समाज आगे आएगी तभी देश की सरकार भी इसके महत्त्व से परिचित हो सकेगी एवं प्राकृत भाषा के साथ-साथ हमारी संस्कृति, तीर्थ, कला आदि के संरक्षण एवं संवर्धन में सहयोग प्रदान कर सकेगी।

आज हम हमारे अवकाश आदि का सदुपयोग करते हुए जर्मन, फ्रेंच, चाइनीस आदि विदेशी भाषाओं को सीखने के लिए कोर्स करते हैं। यह भाषाएँ कितनी ही कठिन क्यों न हो फिर भी बड़े मनोयोग से हम इन्हें सीखने के लिए तत्पर रहते हैं, और संभाषण आदि में पारंगत हो जाते हैं। फिर प्राकृत भाषा के प्रति इतनी उदासीनता क्यों ! जब आप विभिन्न विदेशी भाषा सीख सकते हैं तो, प्राकृत भी सहज ही सीख सकते हैं। आज भारत के साथ-साथ विदेशों में भी ऐसे कई संस्थान एवं विश्वविद्यालय हैं, जो विद्यार्थियों के लिए प्राकृत के प्राथमिक एवं उच्च पाठ्यक्रमों की कार्यशालाएँ एवं सर्टिफिकेट कोर्स आयोजित करते हैं, जिनमें प्राकृत के वरिष्ठ, युवा एवं पारंपरिक विद्वानों द्वारा अध्यापन कार्य किया जाता है। इन कार्यशालाओं में विभिन्न क्षेत्रों में कार्य कर रहे युवा, प्रौढ़ आदि भी अपने समय कि अनुकूलता देखते हुए स्वरुचि से भाग लेकर प्राकृत भाषा का अध्ययन कर सकते हैं।

यह खुशी की बात है कि प्राकृत भाषा के संरक्षण एवं संवर्धन के उद्देश्य से प्राकृत भाषा में लगभग आठ वर्षों से अनवरत रूप में 'पागद भासा' नामक समाचार पत्रिका भी प्रकाशित हो रही है, जो कि विश्व की पहली 'प्राकृत पत्रिका' होने के नाते, अपने आप में आधुनिक समय में प्राकृत को व्यावहारिक बनाने का एक अनूठा एवं अनुकरणीय प्रयास है। इस पत्रिका के संपादक डॉ. अनेकान्त कुमार जैन, नई दिल्ली हैं। आज हमें प्राकृत भाषा को बढ़ावा देने हेतु ऐसे ही अभिनव कार्य करने की आवश्यकता है। भगवान् महावीर ने जिस भाषा को अपने उपदेशों का माध्यम बनाया, और जिन महान् आचार्यों ने उनकी वाणी को अपने अथक प्रयासों द्वारा सृजित साहित्य के माध्यम से हमें उपहार स्वरूप प्रदान किया है; हम वह अमूल्य ऋण चुकाने के पात्र तो नहीं, लेकिन हमारा परम कर्तव्य बनता है कि हम श्रुत-रक्षा के साथ-साथ, प्राकृत भाषा के संरक्षण और संवर्धन का भी संकल्प लें। यही इस श्रुतपंचमी प्राकृत दिवस महापर्व की सार्थकता है।







## महावीर के सिद्धांतों की प्रासंगिकता

- श्रीमती नन्दिनी जैन, इन्दौर

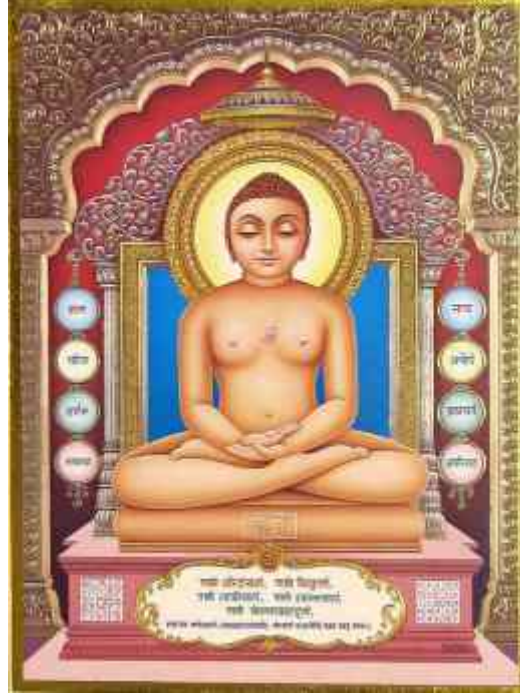
वर्तमान शासननायक भगवान महावीर जिन्हें हम 'वीर', 'अतिवीर', 'सन्मति' एवं 'वर्द्धमान' नाम से भी जानते हैं, ने जिन सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार किया वे हमारी महान तीर्थंकर परम्परा में सतत चले आ रहे हैं। भगवान महावीर अथवा वर्द्धमान के सिद्धांत सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक हैं। वे 2600 वर्ष पूर्व मानवता के लिए दिशा दिखाने वाले थे और आज की संतुष्ट मानवता को भी संकट से उबारकर एक सुंदर, सुखद, व्यवस्थित, शांतिपूर्ण जीवन जीने की राह दिखा सकते हैं। मेरी दृष्टि से भगवान महावीर के पाँच मूलभूत सिद्धांत हैं।

1. अहिंसा
2. सत्य
3. अचौर्य
4. ब्रह्मचर्य
5. अपरिग्रह

हमारे कुछ विद्वान थोड़ा भिन्न तरीके से भगवान महावीर के सिद्धांत बताते हैं। वे कहते हैं अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकांत जैन धर्म के तीन सिद्धांत हैं। इनमें से अहिंसा एवं अपरिग्रह तो पहले पाँच में आ ही गये और अनेकांत भी सत्य में समाविष्ट हो जाता है। कर्मसिद्धांत, समता का भाव, नारी शिक्षा आदि और भी इस सूची में जोड़े जा सकते हैं। किन्हीं भी सिद्धांतों की प्रासंगिकता का आंकलन वर्तमान समस्याओं के समाधान में उनकी उपयोगिता और सक्षमता के आधार पर किया जाना चाहिए। वर्तमान में समस्याएँ तो बहुत हैं किन्तु जिन समस्याओं से मानवता के अस्तित्व और सम्पूर्ण विश्व के सम्मुख गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं, मैं यहाँ उन समस्याओं को क्रमवार सूचीबद्ध कर रही हूँ। महावीर द्वारा प्रतिपादित जीवनशैली एवं सिद्धांतों से इनका समाधान ढूँढा जा सकता है। यही उनकी सच्ची प्रासंगिकता है।

1. आतंकवाद की समस्या
2. राष्ट्र विस्तारवाद की समस्या
3. आर्थिक शोषण एवं उत्पीड़न की समस्या
4. पर्यावरण प्रदूषण की समस्या
5. कोविड-19, बर्ड फ्लू, मेडकाउ एवं एड्स सदृश महामारियों की समस्या
6. संयुक्त परिवारों के विघटन की समस्या
7. बढ़ता अनाचार एवं संस्कार हीनता की समस्या

**1. आतंकवाद की समस्या:-** 26.11 की वो दुर्दांत रात्रि जब होटल ताज, होटल ओबेरॉय, नरीमन हाऊस, छत्रपति शिवाजी टर्मिनल



मुम्बई जैसे स्थानों पर निरपराध पुरुषों, माताओं, बहनों एवं बच्चों की हत्या आतंकवादियों द्वारा कर दी गई। पुलवामा, पठानकोट एवं कश्मीर में हुए आतंकवादी हमले हम कैसे भूल सकते हैं? इनमें सैकड़ों निरपराध मारे गये जिनमें हमारे जैनी भाई एवं परिवार भी सम्मिलित थे। आतंकवाद मानवता पर कलंक है और जिस समाज में आतंकवाद हो वहाँ सुख, शांति एवं स्थायित्व नहीं आ सकता। हर वक्त भय का वातावरण रहता है। ईरान का नरसंहार हो या उत्तर कोरिया का, सब आतंकवाद के ही पर्याय हैं। अयातुल्ला खोमेनी एवं किम जोंग की बर्बरता सबको मालूम है। इस्लामिक संगठनों, अलकायदा, लश्करे तोएबा एवं तालिबानियों की बर्बरता जग जाहिर है। इससे त्राण महावीर की अहिंसा ही दिला सकती है। जिसमें सबके लिए अभय है। हृदय परिवर्तन है।

### 2. राष्ट्र विस्तारवाद की समस्या:-

पिछले साल चीन द्वारा लद्दाख और अरुणाचल प्रदेश में किये गये हमले एवं वर्तमान में रूस द्वारा यूक्रेन में किये जा रहे हमले। ये सभी राष्ट्रों की विस्तारवादी नीति के ही परिणाम हैं। हांगकांग की स्वतंत्रता समाप्त कर उसे चीनी उपनिवेश बनाया जा चुका है। ताईवान पर उसकी गिद्ध दृष्टि लगी हुई है। हमारे देश का अभिन्न अंग तिब्बत चीनी कब्जे में है। POK को आजाद काश्मीर कहना ही गलत है वो तो गुलाम काश्मीर है। जहाँ रोज काश्मीरियत की हत्या होती है। संक्षेप में विभिन्न देशों की अपनी राष्ट्र की सीमाओं के विस्तार की पिपासा एवं वहाँ के संसाधनों को प्राप्त करने की आकांक्षा ने हजारों नहीं लाखों जिन्दगियाँ ली ली हैं। ऐसे में वहाँ कौन बात करेगा संस्कारों की? प्रेम की, वात्सल्य की। काश! इन देशों के शासकों ने भगवान महावीर की अहिंसा को पढ़ा होता तो ऐसा दुष्कर्म कभी न करते।

### 3. आर्थिक शोषण एवं उत्पीड़न की समस्या:-

हमारे देश में नक्सलवाद की समस्या, उल्फा, नागा, बोडो, उग्रवादियों की समस्या, लालखण्डी, झारखण्डी एवं चम्बल के बागियों की समस्या इन सबमें यदि कोई चीज समान है तो वो है आर्थिक शोषण। यदि समाज का सम्पन्न वर्ग महावीर के अपरिग्रहवाद को अपनाकर समाज से न्यायपूर्वक अर्जित धन का ट्रस्टी बनकर समाजकल्याण के कार्य भी करें और गरीब, बेसहारा, पीड़ित, उपेक्षित वर्ग का शोषण बंद कर दे तो ऐसी समस्याएँ जड़मूल से ही समाप्त हो जायेगी। चम्बल का कोई गरीब जब अपना अधिकार कानून से नहीं ले पाता तो वह बन्दूक उठाकर बागी बनकर चम्बल के बीहड़ों में उतर जाता है। कमोबेश यही हालत नक्सलियों, उल्फा, बोडो, नागा, उग्रवादियों की भी है।



यदि महावीर की अहिंसा और अपरिग्रह को जीवन में उतारकर हम न्यायपूर्वक उपार्जित धन से अपने और अपने परिवार की आवश्यकता की पूर्ति के उपरान्त शेष धन का समाज के कल्याण में, निर्धनों के हित में उपयोग करे तो ये समस्याएँ पैदा ही नहीं होगी। किसी ने मजबूरी में कुछ धन साहूकार से लिया तो समय से वापसी की याद दिलाने या प्रेरित करने हेतु थोड़ा ब्याज तो जायज है किन्तु ब्याज के नाम पर उसका पीढ़ी-दर-पीढ़ी शोषण कदापि जायज नहीं। आदिवासियों, वनवासियों का हमने खूब शोषण किया। वनोपज सस्ते में खरीदी किन्तु उनकी मदद करने में हम पीछे रह जाते हैं। यह शोषण ठीक नहीं। एक अहिंसक जीवन जीने वाला शोषक हो ही नहीं सकता। पूँजीवाद एवं समाजवाद दोनों के असफल हो जाने पर अब दुनिया की दृष्टि अपरिग्रहवाद पर है।

**4. पर्यावरण प्रदूषण की समस्या:-** प्रदूषण से धनी-निर्धन सभी प्रभावित होते हैं। दिल्ली का वायु प्रदूषण एवं गंगा का जल प्रदूषण लम्बे समय से चर्चा के केन्द्र में है। यदि महावीर की स्थावर जीवों के घात से यथासंभव बचने की शिक्षा को अपनाया गया होता तो न जल प्रदूषण होता और न वायु प्रदूषण। महावीर तो प्राचीन काल से ही वनस्पतियों में जीवन मानते रहे हैं। फिर पेड़ काटने की बात ही नहीं। महावीर की अहिंसा में पृथ्वी को अनावश्यक न खोदना, नदियों में दूषित जल एवं अवशिष्ट न मिलाना, वायु में विषैली गैसों को न छोड़ना, दूषित अभक्ष्य पदार्थों को अग्नि में न जलाना तथा हरे-भरे पेड़ों को न काटना सम्मिलित है एवं यही प्रदूषण निवारण का समीचीन उपाय भी है। आज हमारी नदियों का पानी पीने लायक तो दूर

नहाने लायक भी नहीं बचा। आखिर क्यों? क्योंकि हमने नदियों को निर्जीव मान लिया। यदि जल में जीव मानकर उनकी रक्षा की जाती तो प्रदूषण का यह भयावह रूप न होता।

**5. कोविड-19, बर्ड फ्लू, मेडकाउ एवं एड्स सदृश महामारियों की समस्या:-** उक्त में से प्रथम 3 महामारियों का मूल मांसाहार है। उन्मुक्त सेक्स एवं व्यभिचार को रोके बिना AIDS पर स्थायी नियंत्रण संभव नहीं है। चीन में जिन्दा जानवरों के प्रति बर्बरता, उनको तत्काल कल्ल कर खाना क्या कोविड-19 के मूल में तो नहीं? बर्ड फ्लू एवं मेडकाउ की बीमारियाँ तो उनके आहारों में मांस अवशिष्ट मिलाकर खिलाने से ही होती है। एड्स के कारण कई हो सकते हैं किन्तु सबसे प्रमुख है जीवनसाथी के प्रति वफादार न होना। यदि ब्रह्मचर्य अणुव्रत के परिपालन में स्वदार संतोष किया जाये, संबंधों की मर्यादा रखी जाये। तो एड्स की महामारी फैल ही नहीं सकती।

**6. संयुक्त परिवारों के विघटन की समस्या:-** संयुक्त परिवारों के विघटन ने परिवारों पर नियंत्रण खो दिया है। नौकरी की मजबूरी हो तो बात समझ में आती है लेकिन स्वच्छन्दता एवं स्वतंत्रता के नाम पर परिवार को तोड़ना घातक है। बढ़ते अनाचार, व्यभिचार पर संयुक्त परिवार में सहज ही नियंत्रण हो जाता था एवं आज भी हो रहा है।

संक्षेप में आज विश्व की समस्याओं का समाधान वर्द्धमान के सिद्धान्तों में ही है तथा उनके सिद्धान्त आज भी प्रासंगिक हैं। जरूरत है उन्हें सही परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने एवं समझने की।



## डॉ. महावीर शास्त्री राष्ट्रीय प्राकृतविद्या पुरस्कार से सन्मानित

**सोलापूर :** वालचंद महाविद्यालय के प्राकृत विभाग प्रमुख तथा भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी महाराष्ट्र आंचल के महामंत्री प्रो. डॉ. महावीर प्रभाचंद्र शास्त्री को 'प्राकृतविद्या रजतमणी' राष्ट्रीय पुरस्कार भव्य समारोहपूर्वक प्रदान किया गया। राष्ट्रपति पुरस्कार के बाद १० साल में प्राकृत भाषा हेतु किये हुए उत्कृष्ट कार्य, प्राकृतसंबंधी लघु और बृहत् शोधकार्य, विविध प्राचीन ग्रंथानुवाद एवम् प्रकाशन, विद्यापीठ स्तर पर पदव्युत्तर प्राकृत-पाली-संस्कृत विभाग के लिये किये हुए प्रयास, अंतर्राष्ट्रीय स्तरपर विविध कार्यशाला-सेमिनार एवम् विविधांगी सांस्कृतिक उल्लेखनीय कार्य हेतु यह पुरस्कार दिया गया।

उदयपुर से प्राच्यविद्या समिति एवम् मोहनलाल सुखाडिया विद्यापीठ द्वारा दिया गया राष्ट्रीय पुरस्कार डॉ. शास्त्री और उनकी पत्नी डॉ. माधुरी शास्त्री इनको जिल्हाधिकारी ताराचंद मीणा, विद्यापीठ के कुलगुरु डॉ. अमेरिका सिंह, उपमहापौर पारस सिंगवी अनेक विद्वान और परमपूज्य आचार्यश्री सुनिलसागरजी महाराज के मंगल सान्निध्य में प्रदान किया गया। आचार्यश्री विद्यानंदजी के सान्निध्य में दिल्ली से प्राप्त हुये प्राचीन भाषा एवम् लिपि का ज्ञान और अनेक गुरुओं के आशीर्वाद आज फलित हुये हैं। ऐसे उद्गार डॉ. शास्त्रीजी ने पुरस्कार प्राप्त करते हुए कहा। इसी प्रसंगपर वैशाली



शोध संस्थान के पूर्व निदेशक डॉ. ऋषभचंद फौजदार-बिहार, बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ के डायरेक्टर डॉ. जयकुमार उपाध्ये, ला.ब.शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ के प्राकृत विभाग प्रमुख डॉ. कल्पना जैन-दिल्ली, सुखाडिया विश्वविद्यालय प्राकृत विभाग प्रमुख डॉ. जिनेंद्र जैन-उदयपुर, डॉ. राजेंद्र उपाध्ये-श्रवणबेळगोळ, डॉ. आशीष जैन आदि को भी विविध राष्ट्रीय पुरस्कारों से सन्मानित किया गया।

इस विशेष उपलब्धि हेतु तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष श्री शिखरचंद पहाडिया, महामंत्री श्री संतोषजी पेंढारी, महाराष्ट्र अंचल के अध्यक्ष श्री अनिल जमगे, उपाध्यक्ष श्री रविंद्र कटके, कोषाध्यक्ष श्री फूलचंद जैन-इंगलवार आदि ने शास्त्रीजी का विशेष अभिनंदन किया।





## कुतुबमीनार : जैन मानस्तंभ या सुमेरू पर्वत ?

डॉ. अनेकांत कुमार जैन, नई दिल्ली

हमें ईमानदारी पूर्वक भारत के सही इतिहास की खोज करनी है तो हमें जैन आचार्यों द्वारा रचित प्राचीन साहित्य और उनकी प्रशस्तियों का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। यह बात अलग है कि उनके प्राचीन साहित्य को स्वयं भारतीय इतिहासकारों ने उतना अधिक उपयोग इसलिए भी नहीं किया क्यों कि जैन आचार्यों द्वारा रचित साहित्य के उद्धार को मात्र अत्यंत अल्पसंख्यक जैन समाज और ऊँगली पर गिनने योग्य संख्या के जैन विद्वानों की जिम्मेदारी समझा गया और इस विषय में राजकीय प्रयास बहुत कम हुए। इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि कुछ सांप्रदायिक भेद भाव का शिकार भी जैन साहित्य हुआ है और यही कारण है कि आज भी जैन आचार्यों के द्वारा संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश आदि विविध भारतीय भाषाओं में प्रणीत हजारों लाखों हस्तलिखित पांडुलिपियाँ शास्त्र भंडारों में अपने संपादन और अनुवाद आदि की प्रतीक्षा में रखी हुई हैं।

प्राचीन काल से आज तक जैन संत बिना किसी वाहन का प्रयोग करते हुए पदयात्रा से ही पूरे देश में अहिंसा और मैत्री का सन्देश प्रसारित करते आ रहे हैं। दर्शन, कला, ज्ञान-विज्ञान और साहित्य रचना में उनकी प्रगाढ़ रुचि रही है। अपने लेखन में उन्होंने हमेशा वर्तमान कालीन देश काल, परिस्थिति, प्रकृति सौंदर्य, तीर्थयात्रा, राज व्यवस्था आदि का वर्णन किया है। उनके ग्रंथों की प्रशस्तियाँ, गुर्वावलियाँ आदि भारतीय इतिहास को नयी दृष्टि प्रदान करते हैं। यदि इतिहासकार डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी की कृति 'भारतीय इतिहास : एक दृष्टि' पढ़ेंगे तो उन्हें नया अनुसंधेय तो प्राप्त होगा ही साथ ही एक नया अवसर इस बात का भी मिलेगा कि इस दृष्टि से भी इतिहास को देखा जा सकता है। जैन साहित्य में इतिहास की खोज करने वाले ९५ वर्षीय वयोवृद्ध विद्वान् प्रो. राजाराम जैन जी जिन्होंने अपना पूरा जीवन प्राकृत और अपभ्रंश की पांडुलिपियों के संपादन में लगा दिया, यदि उनकी भूमिकाओं और निबंधों को पढ़ेंगे तो आँखें खुल जाएँगी और लगेगा कि आधुनिक युग में भौतिक विकास के उजाले के मध्य भी भारत के वास्तविक इतिहास की अज्ञानता का कितना सघन अन्धकार है।

मुझे लगता है कि उन्होंने यदि १२-१३ वीं शती के जैन संतकवि बुधश्रीधर द्वारा अपभ्रंश भाषा में रचित जैनधर्म के तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के जीवन पर आधारित रचित ग्रन्थ 'पासणाह चरिउ' की पाण्डुलिपि का संपादन और अनुवाद न किया होता तो दिल्ली और कुतुबमीनार के इतिहास की एक महत्वपूर्ण जानकारी कभी न मिल पाती।

आज मध्यकालीन भारतीय इतिहास में तोमरवंशी राजाओं की चर्चा बहुत कम होती है, जब कि दिल्ली एवं मालवा के सर्वांगीण विकास में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। दिल्ली शाखा के तोमरवंशी राजा अनंगपाल (१२वीं सदी) का नाम अज्ञान के कुहासे में विलीन होता जा रहा था किन्तु हरियाणा के जैन महाकवि बुधश्रीधर अपने "पासणाहचरिउ" की विस्तृत प्रशस्तियों में उसका वर्णन कर उसे स्मृतियों में धूमिल होने से बचा

लिया। दिल्ली के सुप्रसिद्ध इतिहासकार कुंदनलाल जैन जी लिखते हैं कि तोमर साम्राज्य लगभग ४५० वर्ष तक पल्लवित होता रहा उसका प्रथम संस्थापक अनंगपाल था। एक जैन कवि दिनकर सेनचित द्वारा अणंगचरिउ ग्रन्थ लिखा गया था जो आज उपलब्ध नहीं है किन्तु उसका उल्लेख महाकवि धवल हरिवंस रास में और धनपाल के बाहुबली चरिउ में किया गया है। यदि यह ग्रन्थ किसी तरह मिल जाय तो इतिहास की कई गुत्थियाँ सुलझ सकती हैं।

बुधश्रीधर के साहित्य से ज्ञात होता है कि वे अपभ्रंश भाषा के साथ साथ प्राकृत, संस्कृत भाषा साहित्य एवं व्याकरण के भी उद्भट विद्वान थे। पाणिनि से भी पूर्व शर्ववर्म कृत संस्कृत का कातन्त्र व्याकरण उन्हें इतना अधिक पसंद था कि जब वे दिल्ली (वर्तमान दिल्ली) की सड़कों पर घूम रहे थे तो सड़कों के सौन्दर्य की उपमा तक कातन्त्र व्याकरण से कर दी –

**'कातंत इव पंजी समिद्ध'**

– अर्थात् जिस प्रकार कातन्त्र व्याकरण अपनी पंजिका (टीका) से समृद्ध है उसी प्रकार वह दिल्ली भी पदमार्गों से समृद्ध है।

१२-१३ वीं सदी के हरियाणा के जैन महाकवि बुधश्रीधर अपूर्व कवित्व शक्ति के साथ घुमक्कड़ प्रकृति के भी थे किन्तु उसकी वह घुमक्कड़ प्रकृति रचनात्मक एवं इतिहास दृष्टि सम्पन्न भी थी। एक दिन वे जब अपनी एक अपभ्रंशभाषात्मक **चंदप्पहचरिउ** (चन्द्रप्रभचरित) को लिखते-लिखते कुछ थकावट का अनुभव करने लगे, तो उनकी घूमने की इच्छा हुई। अतः वह पैदल ही यमुनानगर होते हुये दिल्ली (तेरहवीं सदी में यही नाम प्रसिद्ध था) अर्थात् दिल्ली आ गये। यह पूरी कहानी उन्होंने अपनी प्रशस्ति में लिखी है।

उन्होंने लिखा है – 'दिल्ली (दिल्ली) में सुन्दर-सुन्दर चिकनी-चुपड़ी चौड़ी-चौड़ी सड़कों पर चलते-चलते तथा विशाल ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं को देखकर प्रमुदित मन जब आगे बढ़ा जा रहा था तभी मार्ग में एक व्यक्ति ने उनके हाव-भाव को देखकर उन्हें परदेशी और (अजनबी) समझा अतः जिज्ञासावश उनसे पूछा कि आप कौन हैं और कहाँ जा रहे हैं? तब उन्होंने कहा कि मैं हरियाणा-निवासी बुधश्रीधर नाम का कवि हूँ। एक ग्रन्थ लिखते-लिखते कुछ थक गया था, अतः मन को ऊर्जित करने हेतु यहाँ घूमने आया हूँ। यह प्रश्नकर्ता था अल्हण साहू, जो समकालीन दिल्ली के शासक अनंगपाल तोमर (तृतीय) की राज्यसभा का सम्मानित सदस्य था। उसने कवि को सलाह दी कि वह दिल्ली के नगरसेठ नटलसाहू जैन जी से अवश्य भेंट करे। साहू नटल की 'नगरसेठ' की उपाधि सुनते ही कवि अपने मन में रुष्ट हो गया। उसने अल्हण साहू से स्पष्ट कहा कि धनवान् सेठ लोग कवियों को सम्मान नहीं देते। वे क्रुद्ध होकर नाक-भौंह सिकोड़ कर धक्का-मुक्की कर उसे घर से निकाल बाहर करते हैं। यथा-







.....अमरिस—धरणीधर—सिर विलग्न णर सरूव तिकखमुह  
कण लग्ग।

असहिय—पर—णर—गुण—गुरूअ—रिद्धि दुव्वयण हणिय  
पर—कज्ज सिद्धि।

कय णासा—मोडण मत्थरिल्ल भू—भिउडि—भंडि णिंदिय  
गुणिल्ल।

ऐसा कहकर महाकवि ने नट्टलसाहू (जैन श्रेष्ठी) के यहाँ जाना अस्वीकार कर दिया। फिर भी अल्हणसाहू ने बार बार समझाया और उनकी प्रशंसा में कहा कि उन्होंने दिल्ली में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की प्रतिमा की प्रतिष्ठा भी करवाई है। उनकी उदारता सुनकर बुधश्रीधर बहुत प्रसन्न हुए और उनसे मिलने को तैयार हो गए। बुधश्री अल्हण के साथ नट्टलसाहू के घर पहुँचे और उसकी सज्जनता और उदारता से वह अत्यन्त प्रभावित हुए। भोजनादि कराकर नट्टल ने महाकवि से कहा—मैंने यहाँ एक विशाल नाभेय (आदिनाथ का) मन्दिर बनवाकर शिखर के ऊपर पंचरंगी झण्डा भी फहराया है। उन्होंने चन्द्रमा के धाम के समान आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ स्वामी जी की मूर्ति की भी स्थापना करवाई थी। यह कहने के बाद नट्टल साहू ने महाकवि से निवेदन किया कि मेरे दैनिक स्वाध्याय के लिये पासणाहचरित (पार्श्वनाथ—चरित) की रचना करने की कृपा करें। कवि ने उक्त नाभेय-मन्दिर में बैठकर उक्त ग्रन्थ की रचना कर दी जिसके लिये नट्टलसाहू ने कवि का आभार मानकर उसे सम्मानित किया।

बुधश्रीधर ने दिल्ली के इस स्थान का वर्णन करते समय एक गगन मंडल को छूते हुए साल का वर्णन किया है जिसकी तुलना अपनी विस्तृत प्रस्तावना में प्रो राजाराम जैन जी ने कुतुबमीनार से की है। वे लिखते हैं कि गगनचुम्बी सालु का अर्थ कीर्ति स्तम्भ है जिसका निर्माण राजा अनंगपाल ने अपने किसी दुर्धर शत्रु पर अपनी विजय के उपलक्ष्य में बनवाया था। कवि ने भी उसका उल्लेख नाभेय मंदिर के निर्माण के प्रसंग में किया है चूँकि नट्टलसाहू ने उक्त मंदिर शास्त्रोक्त विधि से निर्मित करवाया था और जैन मंदिर वास्तुकला में मानस्तम्भ मंदिर के द्वार पर अनिवार्य रूप से बनाया जाता है अतः यह 'गगनमंडलालगु सालु' ही वह मानस्तम्भ रहा होगा जो वर्तमान में कुतुबमीनार में तब्दील कर दिया गया।

बुध श्रीधर द्वारा वर्णित उक्त दोनों वास्तुकला के अमर-चिन्ह कुछ समय बाद ही नष्ट-भ्रष्ट हो गए और परवर्ती कालों में मानव स्मृति से भी ओझल होते गए। इतिहास मर्मज्ञ पं. हरिहरनिवास द्विवेदी जी ने बुधश्रीधर के उक्त सन्दर्भों का भारतीय इतिहास के अन्य सन्दर्भों के आलोक में गम्भीर विश्लेषण कर यह सिद्ध कर दिया है कि दिल्ली स्थित वर्तमान गगनचुम्बी कुतुबमीनार ही अनंगपाल तोमर द्वारा निर्मित कीर्तिस्तम्भ है तथा कुतुबुद्दीन ऐबक (वि. स. १२५०) जब दिल्ली का शासक बना तब उसने विशाल नाभेय जैन मन्दिर तथा अन्य मंदिरों को ध्वस्त करा कर उनकी सामग्री से कुतुबमीनार का निर्माण करा दिया तथा नाभेय जैन मंदिर के प्रांगण में कुछ परिवर्तन कराकर उसे कुतुबुल—इस्लाम—मस्जिद का निर्माण करा

दिया। विद्वान भी मानते हैं कि यह मीनार कुतुबुद्दीन ऐबक से कम से कम ५०० वर्ष पहले तो अवश्य विद्यमान थी।

**कुतुबमीनार : सूर्यस्तम्भ, मानस्तम्भ या सुमेरु पर्वत ? -**

कुतुबमीनार मीनार के साथ बनी कुव्वत-उल-इस्लाम नामक मस्जिद के मुख्य द्वार पर अरबी भाषा में लिखा एक अभिलेख (शिलालेख) लगा हुआ है। उसमें कुतुबुद्दीन ऐबक ने लिखवाया है -



**ई हिसार फतह कर्द ई मस्जिद राबसाखत बतारीख फीसहोर सनतन  
समा व समानीन वखमसमत्य अमीर उल शफहालार अजल कबीर  
कुतुब उल दौल्ला व उलदीन अमीर उल उमरा एबक सुलतानी अज्ज  
उल्ला अनसारा व बिस्ती हफत अल बुतखाना मरकनी दर हर  
बुतखाना दो बार हजार बार हजार दिल्लीवाल सर्फ सुदा बूददरी  
मस्जिद बकार बस्ता सदा अस्ता॥**

अर्थात् हिजरी सन् ५८७ (११९१-९२ ईसवी सन्) में कुतुबुद्दीन ऐबक ने यह किला विजय किया और सूर्यस्तम्भ के घेरे में बने २७ बुतखानों (मन्दिरों) को तोड़कर उनके मसाले से यह मस्जिद बनवाई। ये मन्दिर एक-से मूल्य के थे। एक-एक मन्दिर २०-२० लाख दिल्लीवाल (दिल्ली में बने सिक्के का नाम) की लागत से बना हुआ था।

पुरातत्त्व संग्रहालय के निदेशक विरजानन्द दैवकरणि ने मीनार के माप को लेकर लिखा है कि २३८ फीट १ इंच ऊंची मीनार का मुख्य प्रवेशद्वार उत्तर दिशा (ध्रुवतारे) की ओर है। इस मीनार के प्रथम खण्ड में दस (सात बड़ी, ३ छोटी), द्वितीय खण्ड में पांच तथा तीसरे, चौथे, पांचवें खण्ड में चार-चार खिड़की हैं। ये कुल मिलाकर २७ हैं। ज्योतिष के अनुसार २७ नक्षत्र होते हैं। ज्योतिष और वास्तु की दृष्टि से दक्षिण की ओर झुकाव देकर कुतुबमीनार का निर्माण किया गया है। इसीलिये सबसे बड़े दिन २१ जून को मध्याह्न में इतने विशाल स्तम्भ की छाया भूमि पर नहीं पड़ती। कोई भी वहां जाकर इसका निरीक्षण कर सकता है। इसी प्रकार दिन-रात बराबर होने वाले दिन २१ मार्च, २२ सितम्बर को भी मध्याह्न के समय इस विशाल स्तम्भ के मध्यवर्ती खण्डों की परछाई न पड़कर केवल बाहर निकले भाग की छाया पड़ती है और वह ऐसे दीखती है जैसे पांच घड़े एक दूसरे पर औंधे रखे हुये हों।

वे लिखते हैं कि वर्ष के सबसे छोटे दिन २३ दिसम्बर को मध्याह्न में



इसकी छाया २८० फीट दूर तक जाती है, जबकि छाया ३०० फीट तक होनी चाहिये। क्योंकि मूलतः मीनार ३०० फीट की थी (१६ गज भूमि के भीतर और ८४ गज भूमि के बाहर = १०० गज = ३०० फीट)। यह २० फीट की छाया की कमी इसलिये है कि मीनार की सबसे ऊपर के मन्दिर का गुम्बद जैसा भाग टूट कर गिर गया था। जितना भाग गिर गया, उतनी ही छाया कम पड़ती है, मीनार का ऊपरी भाग न टूटता तो छाया भी ३०० फीट ही होती।

संभवतः इसके ऊपर २० फीट की शिखर युक्त बेदी थी जिसमें तीर्थंकर प्रतिमा स्थापित थी जो शायद बिजली आदि गिरने से खंडित हो गयी



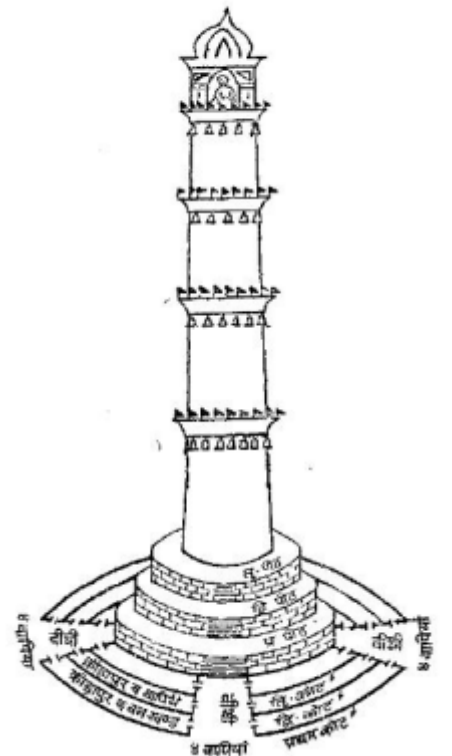
ASI ने अभी कुतुबमीनार के दक्षिण भाग में पार्क में यह छतरी बना कर स्थापित की है। ऐसा बताया जाता है कि यह मीनार का वह उपरी हिस्सा है जो टूट कर गिर गया था।



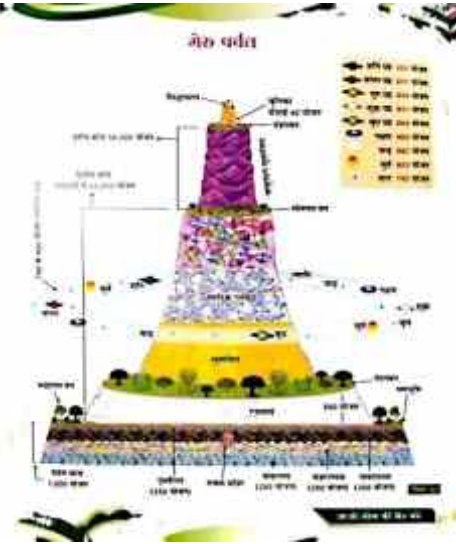
या फिर बुत परस्ती की खिलाफत करने वाले मुगल सम्राटों ने उसे तुड़वा दिया। मीनार चूँकि वास्तुकला का एक अद्भुत नमूना था अतः उस पर पत्थर लगवा कर अरबी में अपने शिलालेख खुदवाकर उसे यथावत् रहने दिया। प्रसिद्ध दार्शनिक और इतिहास के विद्वान् श्री आचार्य उदवीर शास्त्री, श्री महेशस्वरूप भटनागर, श्री केदारनाथ प्रभाकर आदि अनेक शोधकर्ताओं ने सन् १९७०-७१ में कुतुबमीनार और इसके निकटवर्ती क्षेत्र का गूढ़ निरीक्षण किया था। उस

**४-मानस्तम्भ भूमि :-** (ति.प. १४।७६१-७८८)

समय इस मीनार की आधारशिला तक खुदाई भी कराई थी, जिससे ज्ञात हुआ कि यह मीनार तीन विशाल चबूतरों पर स्थित है। पूर्व से पश्चिम में बने चबूतरों की लम्बाई ५२ फीट तथा उत्तर से दक्षिण में बने चबूतरे की लम्बाई ५४ फीट है। यह दो फीट का अन्तर इसलिये है कि मीनार का झुकाव दक्षिण दिशा की ओर है, इसका सन्तुलन ठीक







रक्खा जा सके।

उसी

निरीक्षण काल में श्री केदारनाथ प्रभाकर जी को मस्जिद के पश्चिमी भाग की दीवार पर बाहर की ओर एक प्रस्तर खण्ड पर एक त्रुटित अभिलेख देखने को मिला। उसके कुछ पद इस प्रकार पड़े गये थे -सूर्यमेरुः पृथिवी यन्त्रै मिहिरावली यन्त्रेण। यहाँ इसे सूर्य

मेरु नाम से अभिहित किया गया है। कुछ विद्वान इसे खगोल विद्या से सम्बंधित ज्योतिष केंद्र के रूप में देखते हैं जिसका सम्बन्ध वराहमिहिर से जोड़ते हैं। प्रो राजाराम जैन जी का दावा है कि यह मानस्तम्भ है जो तीर्थंकरों के समवशरण के सामने होता है तथा जैन मंदिर वास्तुकला में मन्दिर के प्रवेश द्वार के करीब निर्मित करवाया जाता है तथा जिस पर तीर्थंकर की प्रतिमा चारों दिशाओं में स्थापित होती है।

हरिवंशपुराण में सुमेरु पर्वत के २५ नाम गिनाये हैं जिसमें सूर्याचरण, सूर्यावर्त, स्वयंप्रभ, और सूरगिरि-ये नाम भी हैं -

**सूर्याचरणविख्यातिः सूर्यावर्तः स्वयंप्रभः।**

**इत्थं सुरगिरिश्चेति लब्धवर्णैः स वर्णितः॥**

जैन आगमों में सुमेरु पर्वत का वर्णन किया गया है। उसके अनुसार जम्बूद्वीप १ लाख योजन विस्तृत थाली के समान गोलाकार है। यह बड़ा योजन है, जिसमें २००० कोस यानि ४००० मील माने गए हैं, अतः यह जम्बूद्वीप ४० करोड़ मील विस्तार वाला है। इसमें बीचों बीच में सुमेरुपर्वत है। पृथ्वी में इसकी जड़ १००० योजन मानी गई है और ऊपर ४० योजन की चूलिका है। सुमेरु पर्वत १० हजार योजन विस्तृत और १ लाख ४० योजन ऊँचा है। सबसे नीचे भद्रसाल वन है, इसमें बहुत सुन्दर उद्यान-बगीचा है। नाना प्रकार के सुन्दर वृक्ष फूल लगे हैं। यह सब वृक्ष, फल-फूल वनस्पतिकायिक नहीं हैं प्रत्युत् रत्नों से बने पृथ्वीकायिक है। इस भद्रसाल वन में चारों दिशा में एक-एक विशाल जिनमंदिर है। इनका नाम है त्रिभुवन तिलक जिनमंदिर। उनमें १०८-१०८ जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं। (यह संक्षिप्त वर्णन है)

अब इस वर्णन को पढ़ने के बाद आप बुधश्रीधर का पासणाह चरिउ की प्रशस्ति में उनके हरियाणा से दिल्ली प्रवेश पर देखे गए ऊँचे स्तंभ का वर्णन हूबहू पढ़िए और स्वयं तुलना कीजिये। वे लिखते हैं - 'जिस दिल्ली-पट्टन में गगन मंडल से लगा हुआ साल है, जो विशाल अरण्यमंडप से परिमंडित है, जिसके उन्नत गोपुरों के श्री युक्त कलश पतंग (सूर्य) को रोकते

हैं, जो जल से परिपूर्ण परिखा (खाई) से आलिंगित शरीर वाला है, जहाँ उत्तम मणिगणों(रत्नों) से मंडित विशाल भवन हैं, जो नेत्रों को आनंद देने वाले हैं, जहाँ नागरिकों और खेचारों को सुहावने लगने वाले सघन उपवन चारों दिशाओं में सुशोभित हैं, जहाँ मदोन्मत्त करटि-घटा (गज-समूह) अथवा समय सूचक घंटा या नगाड़ा निरंतर घड़घड़ाते(गर्जना करते)रहते हैं और अपनी प्रतिध्वनि से दिशाओं विदिशाओं को भी भरते रहते हैं।

**जहिं गयणमंडलालगु सालु रण- मंडव- परिमंडिउ विसालु ॥**

**गोउर- सिरिकलसाहय-पयंगु जलपूरिय- परिहालिगियंगु॥**

**जहिं जणमण गयणाणंदिराईं मणियरगण मंडिय मंदिराईं**

**जहिं चउदिसु सोहहिं घणवणाईं णायर-णर-खयर-सुहावणाईं॥**

**जहिं समय-करडि घडघड हणंति पडिसहें दिसि-विदिसिवि फुंडति ॥**

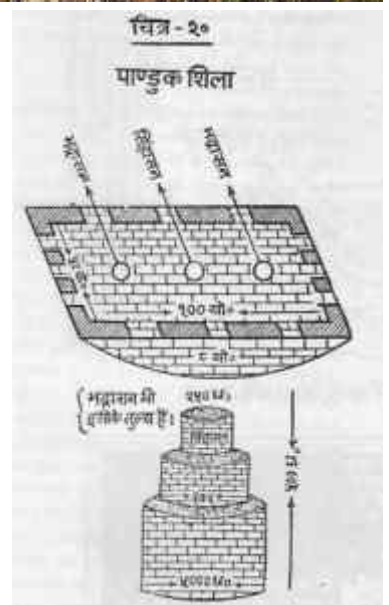
इस बात की भी प्रबल सम्भावना है कि यह जो वर्तमान का कुतुबमीनार है वह सुमेरु पर्वत की रचना है जो शास्त्रोक्त विधि से निर्मित की गयी थी।

**पांडुक शिला -**

कुतुबमीनार परिसर में प्रवेश करने से पूर्व ही पूरब दिशा की तरफ एक और स्मारक बना है जो गोल आकृति का है तथा ऊपर की ओर तीन स्तर पर उसकी आकृति छोटी होती जाती है। मैंने उसे स्वयं देखा और उसके बारे में जानने की कोशिश की तो वहां के गाइड ने कहा कि यह



अंग्रेजों ने ऐसे ही बनवा दिया था। उसकी आकृति देखकर मुझे बुध श्रीधर जी का वह प्रसंग याद आ गया जब नटूल साहू जी ने यहाँ चन्द्रप्रभ तीर्थंकर की प्रतिष्ठा करवाई थी। जैन परंपरा में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा आज भी शास्त्रोक्त विधि से वैसे ही होती थीं। उसमें तीर्थंकर के जन्मकल्याणक के बाद उनके जन्माभिषेक की क्रिया बहुत महत्त्वपूर्ण मानी जाती है जिसमें







सौधर्म इंद्र तीर्थकर बालक को पांडुक शिला पर विराजमान करके उनका अभिषेक करवाने का अनिवार्य अनुष्ठान होता है। इसके लिए आज भी पांडुक शिला का निर्माण वैसा ही करवाया जाता है जैसा शास्त्र में उल्लिखित है। बहुत कुछ सम्भावना है कि यह वही पांडुक शिला है जहाँ नट्टल साहू जी ने चन्द्रप्रभ तीर्थकर की प्रतिमा की प्रतिष्ठा करवाई थी और जन्माभिषेक करवाया था।

**कुतुबपरिसर की कुछ जैन मूर्तियाँ -** बुध श्रीधर इस मंदिर



परिसर का वर्णन करते हुए लिखते हैं- 'जाहि समय करडि घड घड हणंति' जिसका एक अनुवाद यह किया गया है कि जहाँ समय सूचक घंटा गर्जना किया करते हैं। अब आप स्वयं यदि कुतुब परिसर में भ्रमण करें तो वहाँ शायद ही कोई स्मारक ऐसा मिले जिसपर छोटी या बड़ी घंटियाँ उत्कीर्ण न हों। सैकड़ों खम्बे, तोरण और स्वयं मीनार की दीवारों पर चारों ओर घंटियाँ निर्मित हैं। हो न हो इस स्थान पर कोई बड़ा धातु का घंटा भी रहा होगा जो प्रत्येक समयचक्र को अपनी ध्वनि द्वारा सूचित करता होगा। इन्हीं खम्भों पर और छतों पर अनेक तीर्थकर और

देवियों की प्रतिमाएं भी साफ़ उत्कीर्ण दिखलाई देती हैं। मंदिर के परकोटे के बाहर की तरफ जमी की तरफ पद्मावती देवी की उल्टी प्रतिमा भी दिखलाई देती है जिनकी पहचान उनके मस्तिष्क पर नागफण का चिन्ह होने से होती है। कई खम्भों पर जैन शासन देवी अम्बिका आदि भी उत्कीर्ण हैं। प्रमाण स्वरूप



तोमर की प्रशंसा करते हैं और उन्हें नारायण श्री कृष्ण के समान बताते हुए कहते हैं कि जो राजा त्रिभुवन पति



प्रजाजनों के नेत्रों के लिए तारे के समान, कामदेव के समान सुन्दर, सभा कार्यों में निरंतर संलग्न एवं कामी जनों के लिए प्रवर मान का कारण है, जो संग्राम का सेना नायक है तथा किसी भी शत्रु राज्य के वश में न होने वाला और जो कंस वध करने वाले नारायण के समान (अतुल बलशाली) है।

कवि सम्राट अनंगपाल तोमर को नरनाथ की संज्ञा देता है – **णरणाहु पसिद्ध अणंगवाहु**, और कहता है कि दिल्ली पड़न में सुप्रसिद्ध नरनाथ अनंगपाल ने अपने श्रेष्ठ असिवर से शत्रुजनों के कपाल तोड़ डाले, जिसने हम्मीर-वीर के समस्त सैन्य समूह को बुरी तरह रौंद डाला और बंदी जनों में चीर वस्त्र का वितरण किया, जो अनंगपाल दुर्जनों की हृदय रुपी पृथ्वी





के लिए सिरू हलके फाल के समान तथा जो दुर्नय करने वाले राजाओं का निरसन करने के लिए समीर-वायु के समान है, जिसने अपनी प्रचंड सेना से नागर वंशी अथवा नागवंशी राजा को भी कम्पित कर दिया था, वह मानियों के मन में राग उत्पन्न कर देने वाला है। इस प्रकार बुध श्रीधर अपनी प्रशस्ति में इतिहास के अछूते पहलू भी उजागर करते हैं और हम सभी को पुनर्विचार पर विवश करते हैं।

### विमर्श योग्य बिंदु

वर्तमान में कुतुबमीनार के परिसर में भ्रमण करने पर भी यह स्थिति साफ है कि महरौली तथा उसके आसपास स्थित अनेक जैन मंदिरों को तोड़कर उसकी सामग्री से इसका निर्माण करवाया गया था। कुतुबमीनार संज्ञा से यह मान लिया गया कि इसका निर्माण कुतुबुद्दीन ऐबक ने करवाया किन्तु यदि ऐसा होता तो उस पर वह इस बात का उल्लेख जरूर करवाता किन्तु ऐसा नहीं है। कुतुब शब्द अरबी है और उसका अर्थ ध्रुव तारा भी होता है और किताब भी होता है बहुत कुछ सम्भावना इस बात की है कि नाभेय जैन मंदिर परिसर में निर्मित गगन चुम्बी स्तम्भ जिसका वर्णन बुधश्रीधर करते हैं वह जैन मानस्तम्भ या सुमेरु पर्वत की प्रतिकृति था जिसके सबसे ऊपर तीर्थकरों की प्रतिमाएं विराजमान थीं। अरबी में लिखे शिलालेख में जो लिखा है 'सूर्य स्तम्भ के घेरे में बने मंदिरों को तोड़कर' उससे साफ है कि वे सुमेरु पर्वत के नीचे भद्रसाल वन में चारों दिशा में बने एक-एक विशाल जिनमंदिर हैं। जिनका नाम त्रिभुवन तिलक जिनमंदिर है। यह भी एक संयोग है की बुधश्रीधर सम्राट अनंगपाल तोमर को राजा त्रिभुवनपति – 'तिहुअणवड़' नाम से संबोधित करते हैं।

उन दिनों दर्शनार्थी सुमेरु में ऊपर तक उन प्रतिमाओं के दर्शन करने जाते थे तथा खगोलशास्त्र में रूचि रखने वाले विद्वान् यहाँ से उत्तरी ध्रुव तारे को बड़ी ही सुगमता से देखते थे। इसलिए जिस मीनार से कुतुब (ध्रुवतारा) देखा जाय वह कुतुब मीनार- ऐसा नाम प्रसिद्ध हो गया। बुत परस्ती की खिलाफत करने वाले मुगल सम्राटों ने इसके ऊपर विराजमान तीर्थकर भगवान् की प्रतिमाओं को तोड़ दिया और उन मूर्ति के अवशेषों को मीनार की

दीवारों में ही चुनवा दिया। कुतुब (ध्रुवतारा) और कुतुबुद्दीन ऐबक संज्ञा समान होने से इसके नाम परिवर्तन की आवश्यकता नहीं समझी गयी और उसे इसका निर्माता मानने का भ्रम खड़ा होने में भी आसानी हुई।

१९८१ तक इस मीनार की ऊंचाई तक आम जनता भी जाती रही, किन्तु १९८१ में ही घटी एक दुर्घटना में भगदड़ अनेक लोग मीनार के अन्दर मर गए और मीनार के कई पत्थर उखड़ गए। उसके बाद इसे बंद कर दिया गया। वे जो ऊपर के पत्थर टूटे थे उनके अन्दर अनेक जैन तीर्थकरों की प्रतिमाएं निकली थीं और उसका उल्लेख उन दिनों के प्रकाशित अखबारों में किया गया था। आज वे प्रतिमाएं निश्चित रूप से पुरातत्त्व विभाग के पास सुरक्षित होनी चाहिए। अभी भी मीनार के पास कई खम्भों में तीर्थकर की प्रतिमाएं स्पष्ट दिखाई देती हैं जिनका मेरे पास स्वयं लिया हुआ चित्र है।

एक और सम्भावना मैं व्यक्त करना चाहता हूँ। जैन साहित्य में जम्बूद्वीप का वर्णन प्राप्त होता है जिसके मध्य में सुमेरु पर्वत है, इसकी प्रतिकृति जैन साध्वी गणिनी आर्यिका ज्ञानमतीमाताजी की प्रेरणा से हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप में निर्मित की गयी है। यदि आप उस शास्त्रोक्त विधि से निर्मित उक्त सुमेरु पर्वत को देखेंगे उसका अध्ययन करेंगे और कुतुबमीनार को देखेंगे तो उसकी बनावट देखकर सहज ही कह उठेंगे कि यह छोटा कुतुबमीनार है। इसे मैंने तुलनात्मक रूप से एक चित्र के माध्यम से प्रदर्शित किया है। यह सारे विषय बहुत बड़ी अनुसंधान परियोजना की अपेक्षा करते हैं।

कुतुब परिसर का जो प्राचीन प्रवेश द्वार है वह और उसका पूरा अधिष्ठान नाभेय मंदिर का प्रवेश द्वार जैसा ही लगता है। पहली शताब्दी के प्राकृत भाषा में आचार्य यति वृषभ द्वारा रचे जैन ग्रन्थ तिलोयपण्णत्ति में चौथे अधिकार में तीर्थकर के समवशरण के सबसे पहले धूलिसालों का वर्णन किया है जिसके चित्र की तुलना आप कुतुब परिसर के प्रवेशद्वार से कर सकते हैं -

आज महरौली में ही एक प्राचीन जैन दादा बाड़ी भी है जिसमें बहुत



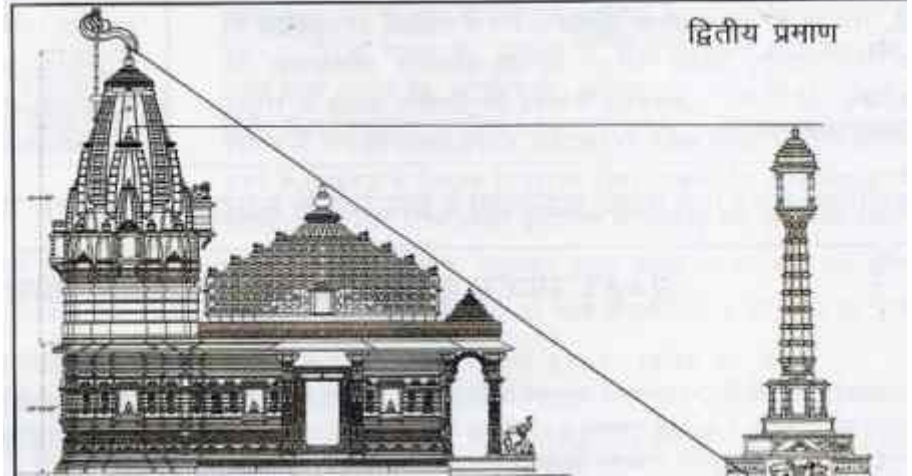
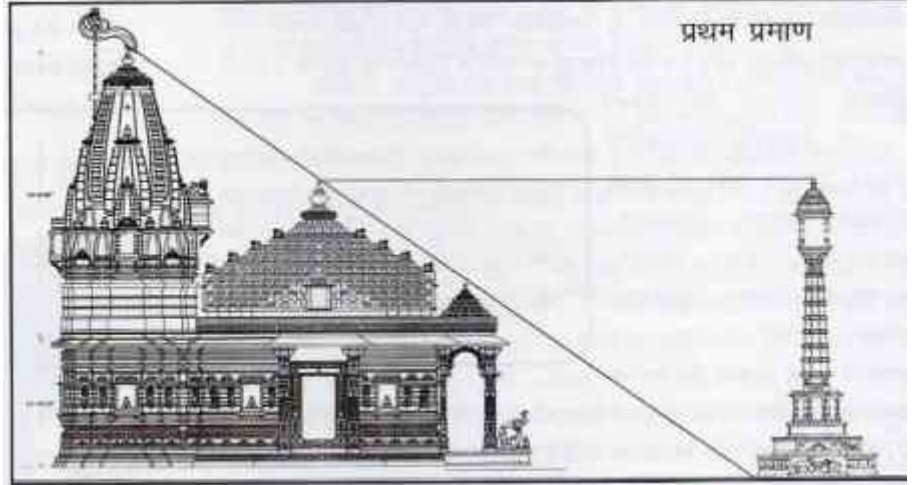




सुन्दर  
श्वेताम्बर जैन  
मंदिर है ।  
इसका  
जीर्णोद्धार एवं  
नवीन निर्वाण  
किया गया है ।  
यह महरौली  
के उन्हीं जैन  
मंदिरों की  
शृंखला का  
एक भाग है  
जिन्हें ध्वंस  
करके

कुतुबमीनार

एवं उसके परिसर का निर्माण हुआ था । कुतुबमीनार के ही  
समीप लाडोसराय के चौराहे पर तथा गुरुग्राम के रोड पर एक  
विशाल जैन मंदिर अहिंसा स्थल नाम से इसी बीसवीं  
शताब्दी में श्रेष्ठी स्व.प्रेमचंद जैन जी(जैना वाच) के द्वारा  
निर्मित हुआ है जिसमें एक लघु पहाड़ी पर चौबीसवें तीर्थंकर  
भगवान् महावीर की सुन्दर मनोज्ञ वीतराग भाव युक्त लाल  
ग्रेनाइट पत्थर विशाल प्रतिमा खुले आकाश में स्थापित है  
जिसके दर्शन बहुत दूर से ही होने लगते हैं ।



मेरा तो बस इतना सा निवेदन यह है कि इस विषय में आग्रह मुक्त  
होकर अनुसन्धान किया जाय । यह हमारे भारत के गौरव शाली अतीत के ऐसे

साक्ष्य हैं जिन्हें दबाने के भरकस यत्न किये गए किन्तु अब उन्हें सामने लाने  
का सार्थक प्रयास करना चाहिए ।







## सम्यग्दर्शन की महिमा

-(प्रज्ञाश्रमण) आचार्य देवनन्दि



इस संसार में शीतल ना चंदन ना चंद्रमा, ना गंगा का पानी ना मटकेका पानी, ना वृक्ष की छाया है। इस संसारमें शांति देने वाली जिनेंद्र भगवान की वाणी और साधुजनों के वचन ही शीतलता और शांति देने वाले हैं। यदि संसारी प्राणी का मन भटक गया है, विचारों में अस्थिरता आ गयी है, तो मन बदलता रहता है। मन तो बदलेगा, क्योंकि मन को लगाम लगाने वाला कोई नहीं। ऐसी स्थिति में हम भटक गये हों बिल्कुल अनजाने रास्तेपर एक चौराहे पर खड़े हों, बिल्कुल अनजाना आदमी हो तो उसे मंजिल तक कौन से रास्ते से जाना है यह मालूम नहीं होगा। यदि वहीं कहीं गाईड हो और मंजिल को, रास्तेको भूल रहे हों कौनसे रास्ते से होकर हमें मोक्षमार्ग पर जाना है यह ज्ञान नहीं है तो उस समय हमें मोक्षमार्ग का रास्ता या राह दिखाने वाला कोई है तो वह सच्चा गुरु है। दूसरा कोई नहीं दिखा सकता। इसीलिये गुरुको बहुत उपकारी माना है। और यदि उनके बतलाये हुए मार्गपर हम चलते हैं तो हमें मोक्षमार्ग की प्राप्ति हो सकती है। वरना इस संसार में बिना लक्ष्य के जैसे हम भटकते आ रहे वैसे

ही भटकते रहेंगे। इसलिए सर्व प्रथम हमें भूमि को साङ्ग और स्वच्छ बना लेना चाहिये। जिस की भूमि जितनी साङ्ग और स्वच्छ रहेगी उतनाही धर्माचरण करने का अवसर प्राप्त होता रहेगा। भूमि से मतलब जमीनकी साङ्ग सङ्गाई से नहीं। भूमि याने अपनी हृदय रुपी भूमि। आज हम यह देखें कि हमारी हृदयरूपी भूमि पर कहीं मिथ्यात्व की विषैली झाड़ियों तो पैदा नहीं हुई हैं। नहीं तो हमें धर्म की ड्गसल नहीं मिलेगी। सुख और शांतिकी अनुभूति नहीं मिलेगी। इसलिये किसान बीज पेरने के पूर्व कचरा साङ्ग कर लेता है। हमारे आचार्य भी यही कहते हैं। यदि हमें जीवन को धर्ममय, सुखमय, सम्यग्दर्शन युक्त बनाना है तो अपने हृदयमें जो अनंत कषायें बैठी हैं उनका उन्मूलन करना होगा। उनको निकालना होगा। क्योंकि यही मिथ्यात्व हमें सुधरने नहीं देता, भगवान की वाणी को मानने नहीं देता। आगम पर श्रद्धा नहीं करने देता। इस मिथ्यात्व की भूमिपर खडा रहने वाला कल्पना को सत्य और सत्य को कल्पना के रूप में मानता है। जितना सत्य है उसको झूठ समझकर चलता है। और जितना झूठ है उसको सच मानता है। विपरीतता की मान्यताओं को माननेवाला मिथ्यात्व की भूमि पर खडा होने वाला होता है। तुम्हारे पास विश्वास नहीं होता तो तुम नौकरों के ऊपर दुकान का कामकाज नहीं छोड़ते। यदि विश्वास कम हो तो उसको कहोगे कि तुम दुकान की देहली मत चढ़ना। जिस दिन तुममें विश्वास की कमी हो जायेगी उस दिन तुम अपने बेटे से कहोगे तुम अपना घर अलग बसालो, बहू को घर से निकालोगे। यह विश्वास की कमी होने के कारण एक से दो-दो से चार-चार से छः दरारें पड़ गई। एक सुंदर लंबे चौड़े मकान में भी आज श्मशानता मालूम पड़ने लगी। ये आपसी विश्वास की कमी के कारण हैं। अन्यथा क्या वजह थी कि जब आज तक हमने चार बेटों के साथ, नाती-पोतों के साथ, बहू-बेटियों के साथ जिंदगी निकाल दी और आज चार दिन निकालना मुश्किल हो गया है। यह पार्टिशनो का निर्माण होता है विश्वास की कमी के कारण। आज धर्म में भी पार्टिशन हो गया, समाज में भी पार्टिशन हो गया। यह सिर्फ विश्वास की कमी के कारण अपने बीच दीवारें खड़ी हो जाती हैं। जब तक हमारे सम्यग्दर्शन की भूमिका मजबूत नहीं होगी तब तक हमारे बीचमें एक-ना एक दीवार खड़ी हो जायेगी। हमें चाहिए कि हम आपसी विश्वास को बहुत मजबूत रखें। और सबसे पहला विश्वास मोक्षमार्ग में देव-शास्त्र-गुरु के प्रति बनाना पड़ेगा। जब इनके प्रति हमारा विश्वास दृढ बन जायेगा तब हमारे लिए मोक्षमार्ग का एक अखंड रास्ता दिखलाई पड़ेगा। और जिस समय देव-शास्त्र-गुरु के प्रति श्रद्धा में थोड़ी भी कमी आ जायेगी उस समय हमको मोक्षमार्ग खंड खंड दिखलाई पड़ेगा। इसलिए हमारे मन में सम्यग्दर्शन के प्रति श्रद्धा होनी आवश्यक है। सम्यग्दर्शन की महिमा से ही हम मिथ्यात्व से दूर हो सकते हैं।





## जैनाचार्यों द्वारा प्रतिपादित आत्मा का स्वरूप

-प्रो. प्रेमसुमन जैन, उदयपुर

दार्शनिक जगत् में लोक स्वरूप पर चिन्तन करते समय प्रायः प्रत्येक दर्शन के चिन्तकों ने चेतन और अचेतन तत्त्वों के स्वरूप एवं उनके अस्तित्व पर विचार किया है। सामान्य रूप से इन्हें जीव एवं अजीव के रूप में जाना-पहचाना गया है। जैनदर्शन के आचार्यों ने अनेकान्तिक दृष्टि से जीव, आत्मा के स्वरूप एवं उसके विभिन्न परिणामों पर विस्तार से चिन्तन किया है। उनके मतानुसार आत्मा छह द्रव्यों में से एक द्रव्य है और सात तत्त्वों में से एक तत्त्व है, जो स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में है। यही आत्मा सभी द्रव्यों और तत्त्वों में उच्चतम महत्त्व और विकास का द्योतक है।<sup>1</sup> सभी द्रव्यों और तत्त्वों से आत्मा का आन्तरिक सम्बन्ध है, इसलिए यह महार्थ वाला है।<sup>2</sup> इस आत्मा (जीव) की पहचान करने वाले कुछ असाधारण लक्षण आचार्य कुन्दकुन्द ने प्रतिपादित किये हैं कि जीव समस्त पदार्थों को जानता है, देखता है, सुख की इच्छा करता है, दुःख से भयभीत होता है। वह हितकारी एवं अहितकारी कार्य करता है और उनके फल भी वही भोगता है। यथा-

**जाणदि पस्सदि सव्वं इच्छदि सुखं विभेदि दुक्खादो।  
कुव्वरि हिदमतिकं वा भुंजदि फलं तेसिं॥**

-पंचास्तिकाय, गाथा-122

समयसार (गाथा-11) में स्पष्ट रूप से निश्चयनय की दृष्टि से कहा गया है कि ज्ञान में, दर्शन में और चरित्र में दृढ़तापूर्वक भावना करना चाहिए क्योंकि ये तीनों आत्मा के स्वरूप हैं। इसलिए हे ज्ञानी जीव, तू आत्मा की भावना कर।<sup>3</sup> यथा-

**पाणमिह भावणा खलु कादव्वा दंसणे चरित्ते या।  
ते पुण तिण्णिवि आदा तम्हा कुण भावणं आदे॥**

### आत्मा की विभिन्न अवस्थाएं-

जैनदर्शन के अनुसार प्रत्येक जीव चेतन युक्त है। चेतना आत्मा का स्वरूप है। यद्यपि सत्ता रूप में चैतन्य शक्ति सभी प्राणियों में अनन्त होती है, किन्तु विकास की अपेक्षा से वह सब में एक जैसी नहीं होती। ज्ञान के आवरण की सघनता एवं विकलता के अनुसार जीव में चेतना का विकास न्यून या अधिक होता रहता है। क्षयोपशम आदि विभिन्न भावों के द्वारा सांसारिक जीवों के व्यक्तित्व का निर्धारण होता रहता है। इन्हीं भावों के आधार पर जीव अपने स्वरूप एवं कर्तव्य का निर्माण करता है। आचार्य उमास्वामी ने औदारिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भावों को जीव का स्वरूप (स्वतत्त्व) कहा है।<sup>4</sup> ये भाव जीव की पहचान हैं। इनसे ही आत्मा की विभिन्न अवस्थाओं का भान होता है।

जीव के मूलतः दो भेद हैं- (1) संसारी जीव, और (2) मुक्त जीव। कर्मबन्धन से बद्ध एक गति से दूसरी गति में जन्म और मरण करने वाले संसारी जीव कहलाते हैं। जो संसार से बन्धनमुक्त हो चुके हैं, वे मुक्त जीव कहलाते हैं। संसारी जीव के ज्ञान, दर्शन, सुख, बल आदि गुणों

का, कर्म का आवरण चढ़ा हुआ है, जिससे उनके ज्ञान, दर्शन, सुख आदि गुण हीनाधिक रूप में अभिव्यक्त होते हैं। जब तक जीव के साथ क्रोध, मान, माया और लोभ रूप कषायभाव रहते हैं, तब तक जीव के अनन्त ज्ञानादि गुण विकसित नहीं हो पाते। जब संसारी जीव को यह प्रतीति हो जाती है कि यह मेरी दुःखित अवस्था पर पदार्थ के संयोग से है, तो उस संयोग को हटाने के लिए प्रयत्न करता है। मुक्त जीव सभी प्रकार की आकुलताओं और व्याकुलताओं से छूटकर आत्मा के ज्ञान, सुख आदि गुणों में लीन रहते हैं। इन्हें वचनातीत सुख प्राप्त होता है।

जीव को उपयोग लक्षण वाला कहा गया है। उपयोग जैनदर्शन का सैद्धान्तिक शब्द है। इसी उपयोग गुण/प्रवृत्ति के द्वारा जीवत्व की अभिव्यक्ति होती है। जीव स्वरूप से अमूर्त और चैतन्यमय है किन्तु संसारी जीव शरीरधारी होने से, कर्मयुक्त होने से मूर्त दिखायी देता है, उसका चैतन्य स्वरूप अदृश्य है, जो प्रवृत्ति अथवा क्रिया के द्वारा दृश्य होता है। अतः चैतन्यपूर्वक जीव की प्रवृत्ति उसका लक्षण बन जाती है। जीव की चैतन्य और उपयोग की शक्ति आत्मा के विकास को सूचित करती है। जीव में अनन्तज्ञान और अनन्त दर्शन स्वभाव से व्याप्त है, किन्तु उनका उपयोग वीर्यान्तराय कर्म के विलय के अनुसार होता है।<sup>5</sup>

आत्मा द्रव्यार्थिक दृष्टिकोण से अनश्वर और अनुत्पन्न माना जाता है, किन्तु पर्यायार्थिक दृष्टि से जीव उत्पन्न होता है और उसका परिवर्तन होता है।<sup>6</sup> संक्षेप में कहा जाय तो संसारी आत्मा अनादिकाल के कर्मों से बंधा हुआ है और वह स्वयं के द्वारा किये हुए शुभ और अशुभ क्रियाओं का कर्ता और भोक्ता है। वह आत्मा ज्ञाता-दृष्टा है और उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य के त्रयी स्वभाव से युक्त है। वह संकोच और विस्तार गुणवाला होने से प्राप्त शरीर की सीमा तक आकार ग्रहण करता है। वह ज्ञान, आनन्द आदि विशिष्ट गुणों का स्वामी है। यही संसारी आत्मा अपने पुरुषार्थ से संयम, तप, ध्यान आदि द्वारा सिद्धात्मा बनने की शक्ति रखता है।

### आत्मा का क्रमिक विकास-

आचार्य कुन्दकुन्द ने संसारी आत्मा से सिद्धात्मा के रूप में प्रकट होने वाली आत्मा के विकास को विभिन्न रूपों से अभिव्यक्त किया है। मोक्ष पाहुड में बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा के रूप में आत्मा के विकास को स्पष्ट किया है।<sup>7</sup> अनादि काल से कर्मों से लिप्त आत्मा निश्चित अवधि के अनुसार अपना विकास करता है। आचार्य कुन्दकुन्द ने निश्चयनय और व्यवहारनय का प्रयोग करके आत्मा के विकास मार्ग को प्रशस्त किया है।

आचार्य श्री विशुद्धसागर जी अपने समयसार देशना ग्रन्थ में कहते हैं कि आत्मा की द्रव्यसत्ता त्रैकालिक अखण्डित ही है। आत्मा कभी खण्डित नहीं हुई। सत्यता ध्रुव ही होगी। असत्य पर जीवन जिया तो जा सकता है, परन्तु असत्य को जीवन स्वीकार नहीं करता। इसलिए जो भी जिनागम को देखता है, उसे समझ में आ जाता है कि सत्य जीव क्या है?



यह अखण्ड ध्रुव स्वतंत्र आत्मा है। जैनदर्शन की दृष्टि से यदि हम देखें, तो हम यह तो कह पायेंगे कि आत्मा परमात्मशक्ति से सम्पन्न है। जगत् के अन्य दर्शनों में परमात्मा होते हैं, परन्तु जैनदर्शन में परमात्मा बनते हैं। जैनदर्शन एक व्यक्ति को परमात्मा नहीं मानता, प्रत्येक आत्मा में परमात्मशक्ति मानता है। अपनी परमात्म शक्ति को उद्घाटित कर लेना, यही आत्मा का क्रमिक विकास है। जो विकासवादी दर्शन है, वही तो जैनदर्शन है।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण में जीव तीन प्रकार के हैं-बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा। जो व्यक्ति मानता है कि इन्द्रियों की परम सत्ता है, वह बहिरात्मा है। बहिरात्मा शरीर को ही आत्मा समझता है और शरीर के नष्ट होने पर अपने को नष्ट हुआ समझता है। वह इन्द्रियों के विषयों में आसक्त रहता है। वह इच्छित वस्तु के संयोग से प्रसन्न होता है और उसके वियोग से अप्रसन्न। वह मृत्यु के भय से आक्रान्त रहता है। अन्तरात्मा अपने आत्मा को अपने शरीर से भिन्न समझता है। यह निर्भय होता है, अतः उसे लोकभय, परलोकभय, मरणभय आदि नहीं होते। उसके कुल, जाति, रूप, ज्ञान, धन, बल, तप और प्रभुता का मद नहीं होता है। आत्मत्व में रुचि पैदा होने से उसकी सांसारिक पदार्थों में आसक्ति नहीं होती और वह शीघ्र ही जन्ममरण के चक्कर से छूट जाता है। परमात्मा वह है जिसने आत्मोत्थान में पूर्णता प्राप्त कर ली है और काम, क्रोधादि दोषों को नष्ट कर लिया है एवं अनन्त ज्ञान, अनन्त शक्ति और अनन्त सुख प्राप्त कर लिया है तथा जो सदा के लिए जन्ममरण के चक्कर से मुक्त हो गया है।

### आत्मा : कर्ता, अकर्ता-

जीव और पुद्गल कर्म को एक बंध पर्याय के रूप में समझा जाय तो दोनों में भिन्नता का अभाव है। वहाँ जीव में कर्म बंधते हैं और उसे स्पर्श भी किये हुए हैं, यह व्यवहारनय का कथन है। किन्तु जीव और पुद्गल कर्म को भिन्न द्रव्य के रूप में देखा जाय तो वे दोनों अलग-अलग ही हैं। इसलिए जीव में कर्मबंध भी नहीं हैं और उसे छुये हुए भी नहीं हैं। यह निश्चयनय का पक्ष है। जबकि आत्मा का वास्तविक स्वरूप तो इन दोनों बद्धाबद्ध अवस्था से भिन्न प्रकार का है, केवल चैतन्य स्वरूप और अमूर्त स्वरूप है। यथा-

**जीवे कम्मं बद्धं पुटुं चेदि व्यवहारणय भणिदं।**

**सुद्धणयस्स दु जीवे अबद्धपुटु हवदि कम्मं॥**

आचार्य कुन्दकुन्द ने समयसार में यह अनेक स्थलों में स्पष्ट किया गया है कि संसार में आत्मा जो कुछ कार्य, प्रवृत्ति करती हुई दिखायी देती है, वे कार्य आत्मा को शुद्ध, निष्कलंक और लोकातीत त्रिकालवर्ती स्वभाव का कोई प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। आत्मा अपने यथार्थ स्वभाव में पुद्गल कर्मों का कर्ता नहीं है, वह तो अपनी शुद्ध अवस्था का ही कर्ता है। संसारी आत्मा भी पुद्गल कर्मों का कर्ता नहीं है, वह तो केवल अशुद्ध मनोभावों का कर्ता है, जिनके द्वारा पुद्गल परमाणु विभिन्न कर्मों में अपने आपको रूपान्तरित करते हैं। कोई भी द्रव्य अपने स्वभाव के विरुद्ध किसी भी कार्य का कर्ता नहीं है। अपने शुद्ध स्वभाव से परिचित ज्ञानी आत्मा

शुद्ध पर्याय को प्रकट करती है और उन पर्यायों की कर्ता होती है। अज्ञानी आत्मा अशुद्ध भावों को उत्पन्न करती है और वह उनका कर्ता होती है।<sup>8</sup> जैसे स्वर्ण से केवल स्वर्ण की वस्तुएँ उत्पन्न की जाती हैं और लोहे से केवल लोहे की वस्तुएँ बनती हैं। यथा-

**कणयमया भावादो जायंते कुंडलादो भावा।**

**अयमयया भावादो जह जायंते तु कडयादी॥**

**अण्णाणमया भावा अणाणिणो बहुविहा वि जायंते।**

**णाणिस्स दु णाणमया सव्वे भावा तहा होंति॥**

-समयसार, गाथा-130 131

### पारिणामिक भाव-

आचार्य कुन्दकुन्द ने समयसार में स्पष्ट किया है कि ज्ञानी जीव जानने के स्वभाव वाला है। वह अपने परिणामों को ही जानता है और वह कर्म एवं कर्म के फल भी जानता है किन्तु वह आत्मा अपने परिणामों को तन्मय होकर जानता है, जबकि कर्म और कर्म के फल को वह अपने से पृथक् रूप जानता है। अतः वह इनके रूप में किसी भी दशा के परिणामन नहीं करता है, विकारी नहीं बनता है। वह आत्मा वीतराग-स्वरूप निर्विकल्प समाधि में तल्लीन होकर रहता है, इसलिए वह ज्ञानी आत्मा है। जो आत्मा उपादान रूप कर्म के परिणाम का और नो कर्म के परिणाम का करने वाला नहीं है, इस तथ्य को जो अनुभव करता है, वही निश्चय शुद्ध आत्मा ज्ञानी होता है। यथा-

**कम्मस्स य परिणामं णोकम्मस्स य तहेव परिणामं।**

**ण करेदि एदमादा जो जाणदि सो हवदि णाणि॥**

-समयसार, गाथा-80

व्यवहार नय से आत्मा पुण्यपापादि कर्मों का कर्ता है और निश्चय नय से इन परिणामों को कर्ता नहीं है, इस प्रकार जो जानता है वह ज्ञानी होता है। ज्ञानी जीव अपने अनेक प्रकार के होने वाले परिणामों को जानता हुआ भी निश्चय से पर द्रव्य की अवस्था रूप न परिणामन करता है, न उसको ग्रहण करता है, न उस रूप उत्पन्न ही होता है, इसलिए निश्चय नय आत्मा का कर्ता-कर्म भाव नहीं है। आत्मा अपने भावों से अपने भावों का कर्ता होता है, वह पुद्गल कर्मों के द्वारा किये गये सभी भावों का कर्ता नहीं है। अतः जीव की परिणामनशक्ति स्वभावभूत है।

समयसार देशना ग्रन्थ में परमपूज्य आचार्य श्री विशुद्धसागर जी कहते हैं कि-जीव के परिणाम और कर्म का निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। जीव कर्मों को कर नहीं रहा है, कर्म आत्मा को कर नहीं रहे हैं। ज्ञानियो! आत्मा कर्मों का कर्ता है, यह कथन बंध की अपेक्षा से है। आत्मा कर्मबंध का कर्ता तो है, लेकिन आत्मा कर्मवर्गणा का कर्ता नहीं है। इस दृष्टि से आत्मा त्रैकालिक ही कर्म के कर्तृत्व से रहित है। आत्मा कर्म को ग्रहण नहीं करती, आत्मा कर्मों को उत्पन्न नहीं करती, आत्मा कर्मरूप नहीं होती परमार्थ दृष्टि से। आत्म रागादि भाव को प्राप्त होती है, रागादि भावों से कर्मास्रव होता है, कर्म के आस्रव से संसार होता है और रागादि भाव कर्मबंध के कारण होते हैं। इसलिए ज्ञानियो! निमित्त-नैमित्तिक दृष्टि से





आत्मा कर्मबंध का कर्ता है। कर्ता है, तो-फिर भोक्ता भी है व्यवहारनय से-  
**पुगल कम्मादीणं, कत्ता व्यवहार दो दु णिच्छयदो।**

**चेदण-कम्मा-णादा, सुद्धणया सुद्धभावाणं॥**

रागादि भावों का कर्ता है अशुद्ध निश्चयनय से। शुद्ध चैतन्य भावों का कर्ता है, निश्चयनय से। यह आत्मा भोक्ता भी है। द्रव्यसंग्रह की गाथायें देखना बहुत आवश्यक है-

**ववहारा सुहदुक्खं, पुगल कम्मफलं पभुंजेदि।**

**आदा णिच्छयणयदो, चेदण-भावं खु आदस्सा॥**

व्यवहारनय से यह आत्मा सुख-दुःख को भोगती निश्चय से आत्मा चैतन्य भावों का ही भोक्ता है।<sup>9</sup> परम शुद्ध निश्चयनय से यह आत्मा न किसी का कर्ता है, न किसी का भोक्ता है। भोक्तृत्व भाव और कर्तृत्व भाव राग रूप हैं, द्वेषरूप हैं, संसार दशा है।

भारतीय दर्शनों में उपनिषदों में आत्मा को एक कहा गया है।<sup>10</sup> जबकि सांख्य दर्शन अनेक पुरुषों को मानता है।<sup>11</sup> किन्तु जैनदर्शन के आचार्यों ने अनन्त आत्माएं स्वीकार की हैं। उन सबका स्वतंत्र अस्तित्व है। मुक्त अवस्था में भी वे किसी एक परम आत्मा में विलीन नहीं होती हैं। यद्यपि चेतना और उपयोग आदि की दृष्टि से सभी आत्माएँ समान मानी गयी हैं।

उपनिषदों में आत्मा के परिणाम की चर्चा है कि आत्मा कितनी बड़ी, छोटी है। कहीं उसे अणु से भी अणु, कहीं जौ या चावल के दाने बराबर और कहीं अंगुष्ठ प्रमाण आत्मा का परिणाम कहा गया है।<sup>12</sup> न्याय, वैशेषिक आदि वैदिक दर्शनों में आत्मा को व्यापक कहा गया है। चार्वाक ने आत्मा को माना नहीं, किन्तु चैतन्य को देह परिणाम कहा है। बौद्धों ने अनात्मवाद को मानकर भी पुद्गल(संस्कार) को स्वदेह परिणाम माना है।<sup>13</sup> जैनदर्शन के ग्रन्थों में संसारी आत्मा शरीर से युक्त होती है। उसे जैसा शरीर प्राप्त होता है, उसी के अनुसार आत्मा के प्रदेशों का फैलाव होता है। अतः आत्मा को शरीर-प्रमाण माना गया है। इस प्रकार जैन आचार्यों के इस सिद्धान्त ने कि आत्मा स्वदेहपरिणाम वाली है, प्रायः सभी अन्य दार्शनिकों के इस परिणाम सम्बन्धी विचार का खण्डन कर दिया है। जैनाचार्यों ने आत्मा का निजी गुण चेतना को माना है, आगन्तुक और औपचारिक गुण नहीं। आत्मा मौलिक और स्वतंत्र तत्त्व है। स्वभाव की दृष्टि से आत्मा और ज्ञान में भिन्नता नहीं है।<sup>14</sup>

जैनदर्शन के अनुसार आत्मा नित्यता और परिवर्तन का संश्लेषण रूप है। आत्मा का चेतना स्वरूपगत और भेदमूलक गुण है। इस सिद्धान्त से वेदान्त, सांख्य-योग, न्याय एवं वैशेषिकों की यह मान्यता खण्डित हो जाती है कि आत्मा परिवर्तनीय तत्त्व है। न्याय-वैशेषिक और पूर्व मीमांसा चेतना को आत्मा में आगन्तुक गुण मानते हैं, उनकी यह धारणा जैनदृष्टि से मिथ्या प्रमाणित होती है क्योंकि आत्मा में चेतना उसके अस्तित्व के साथ सदैव रहने वाला गुण है। इससे चार्वाक की यह धारणा भी निरर्थक हो जाती है कि आत्मा में चेतना भौतिक तत्त्वों से मदिरा के मद की तरह उत्पन्न होती है। जैनाचार्यों का यह सिद्धान्त है कि आत्मा स्वयं

कर्ता एवं भोक्ता होने के कारण संसार की कोई भी परोक्ष शक्ति जीव के लिए किसी भी प्रकार का कार्य नहीं करती है। जीव स्वयं अपने भावों को कर्ता भोक्ता है। यह स्वयं अपने पुरुषार्थ से मुक्त एवं शुद्ध स्वरूप को प्राप्त करता है।<sup>15</sup>

जैनदर्शन के अनुसार संसारी आत्मा अनादिकाल से कर्मों से बद्ध है। इसी कारण प्रत्येक संसारी जीव जन्म-मरण के चक्कर में पड़ा रहता है। इतना होते हुए भी प्रत्येक संसारी आत्मा वस्तुतः सिद्ध समान है। दोनों में भेद केवल कर्मों के बन्धन का है। यदि कर्मों के बन्धन को हटा दिया जाय तो आत्मा का सिद्ध स्वरूप जो अनन्त ज्ञान, सुख और शक्ति रूप है; प्रकट हो जाता है। जीव को प्रभु (अपने विकास में समर्थ) कहा गया है, इसका अभिप्राय यह है कि जीव स्वयं ही अपने उत्थान व पतन का उत्तरदायी है। वही अपना शत्रु है और वही अपना मित्र। बन्धन और मुक्ति उसी के आश्रित है। अज्ञानी होने का और बद्ध से मुक्त होने का सामर्थ्य उसी में है, वह सामर्थ्य कहीं बाहर से नहीं आता, वह तो उसके प्रयास से ही प्रकट होता है।<sup>16</sup> जैनदर्शन में जीव विज्ञान का विवेचन करते समय बहिरात्मा, अन्तरात्मा एवं परमात्मा का विस्तार से विवेचन प्राप्त है। यह विश्लेषण जैनदर्शन को आत्मवादी दर्शन के रूप से प्रतिष्ठित करता है। इस आत्मदर्शन का प्रतिपाद्य है- समत्वयोग। इसे समाइय अथवा समाहि (समभाव) कहा है। यह आत्मवत् दृष्टि जैनदर्शन की विशेष पहचान है।

#### सन्दर्भ स्थल-

1. कार्तिकेयानुप्रेक्षा, गाथा-204
2. प्रवचनसार, अधिकार-2, गाथा-100
3. समयसार (आचार्य कुन्दकुन्द), हिन्दी टीका-आचार्य ज्ञानसागर, जबलपुर, 1969
4. तत्त्वार्थसूत्र, अध्यान-2, सूत्र-1
5. समणी मंगल प्रज्ञा, जैन आगम में दर्शन, लाइन्स, 2005
6. प्रवचनसार, अधिकार-2, गाथास 20-22
7. मोक्षपाहुड, गाथा-7
8. समयसार, गाथा-128-129
9. क. द्रव्यसंग्रह (आचार्य नेमिचन्द्र), कुन्दकुन्द भारती, नई दिल्ली ख. समयसार देशना, भाग-5, उपदेशक-परम पूज्य आचार्य श्री विशुद्धसागर जी।
10. ब्रह्मविन्दु उपनिषद्-11
11. सांख्यकारिका, कारिका-11
12. समणी, मंगलप्रज्ञा, जैन आगम में दर्शन, लाइन्स, 2005
13. मालवणिया दलसुख, आत्म-मीमांसा, बनारस, 1953, पृ. 45
14. आचार्य विशुद्धसागर, स्वरूपदेशना विमर्श, आगरा, 2012, पृ. 25
15. सोगाणी, के.सी. : जैनधर्म में आचारशास्त्रीय सिद्धान्त (खण्ड-1) श्री महावीर जी, 2010
16. महेन्द्रकुमार जैन : जैनदर्शन, गणेशप्रसाद वर्णी शोध संस्थान, वाराणसी।





## भक्तामर के इतिहास एवं महत्व पर शोधकार्य हेतु प्रतिवर्ष एक लाख का पुरस्कार

-आचार्य डॉ. प्रणामसागर

परम पूज्य आचार्य डॉ. प्रणामसागरजी महाराज की प्रेरणा से डॉ. अनुपम जैन के संयोजकत्व में 8 मई 2022 को आयोजित एक दिवसीय संगोष्ठी को सम्बोधित करते हुए आचार्य प्रणामसागरजी महाराज ने कहा कि यह स्तोत्र अत्यन्त प्रभावशाली एवं सर्व सुख प्रदान करने वाला है इसी कारण यह सम्पूर्ण समाज में श्रद्धापूर्वक पढ़ा जाता है इसके लेखन का जीवन पर अचिन्त्य प्रभाव पड़ता है आपने पूना के सूरैया परिवार के सौजन्य से प्रतिवर्ष एक लाख रुपये का पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा की। यह पुरस्कार भक्तामर स्तोत्र, आचार्य मानतुंग एवं उनके सृजन के काल, गुरु परम्परा, स्थान तथा भक्तामर के विविध पक्षों पर उत्कृष्ट कार्य करने वाले विद्वान को समारोह पूर्वक प्रदान किया जायेगा।

डॉ. गिरीश पाटोदी के फार्म हाउस पर आयोजित इस संगोष्ठी के मुख्य अतिथि मैनेजमेन्ट गुरु एवं गीता के विश्वविख्यात विद्वान प्रो. प्रभुनारायण मिश्र ने कहा कि मंत्रों में अद्भुत शक्ति होती है। लोग हमारे ऋषि-मुनियों द्वारा बताये गये मंत्रों का जीवन में उपयोग करते हैं। लाभ भी लेते हैं किन्तु सार्वजनिक रूप से उसे स्वीकार नहीं करते हैं मेरा सुझाव है कि मंत्र विज्ञान पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित हो, जिसमें मंत्र विज्ञान के विविध पक्षों पर चिन्तन हो, आपने अपने प्रयोगों एवं उनके परिणामों के बारे में बताया। सत्य एवं लाभप्रद होने पर आधुनिक चिकित्सा के समान ही इस मंत्र चिकित्सा को भी स्वीकार करें। यह हमारे प्राचीन मनीषियों द्वारा परीक्षित एवं उपयोगी है।

कार्यक्रम के अध्यक्ष पं. विनोद कुमार जी (रजवांस) ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में वक्ताओं द्वारा प्रस्तुत विचारों की प्रशंसा करते हुए कहा कि यह अच्छी बात है कि भक्तामर स्तोत्र जैन धर्म की सभी परम्पराओं में मान्य है इसके अचिन्त्य प्रभाव के बारे में सभी एकमत हैं किन्तु श्लोक संख्या, आचार्य मानतुंग की मान्यता, परम्परा, काल एवं रचना प्रक्रिया के बारे में मतभेद हैं। आवश्यकता इस बात की है कि विस्तृत शोध एवं सर्वेक्षण कर इन

मतभेदों का निराकरण किया जाये।

संगोष्ठी के संयोजक डॉ. अनुपम जैन ने सभी 18 प्रतिभागियों को धन्यवाद देते हुए कहा कि आगामी समय में हम शोध कार्य करायेंगे। भक्तामर की रचना प्रक्रिया, काल, आचार्य मानतुंग के व्यक्तित्व, कृतित्व पर एक शोधपूर्ण कृति की रचना कराकर प्रकाशन करेंगे। हम प्रतिवर्ष भक्तामर पर पूज्य आचार्य श्री के प्रवास स्थल पर उनके ही सान्निध्य में संगोष्ठी करायेंगे जिससे नये विचार एवं तथ्य सामने आ सके। अगली संगोष्ठी मुम्बई या पूना के किसी स्थान पर संभावित है। जिसमें देश के मूर्धन्य विद्वानों को आमंत्रित किये जाने की भावना आचार्य श्री ने व्यक्त की है।

1 लाख रुपये के वार्षिक पुरस्कार की घोषणा हेतु सूरैया परिवार, संगोष्ठी के प्रायोजन हेतु श्री आलोक कुमार जैन एवं श्रीमती अभि जैन का सम्मान किया गया तथा श्री गिरीश पाटोदी परिवार को स्थान एवं आतिथ्य प्रदान करने हेतु धन्यवाद दिया गया।

संगोष्ठी में पं. सुरेश जैन 'मारोरा', डॉ. भरत जैन शास्त्री, डॉ. बाहुबली जैन, डॉ. जैनेन्द्र जैन, पं. अशोक शास्त्री, श्रीमती उषा पाटनी, डॉ. संगीता मेहता, डॉ. सुरेखा मिश्रा, डॉ. प्रगति जैन, डॉ. संगीता विनायका, डॉ. समता जैन, डॉ. अल्पना 'मारोरा', श्रीमती रेखा पतंग्या, श्रीमती कौशल्या पतंग्या, श्रीमती निशा जैन ने अपने सारगर्भित विचार व्यक्त किये। कार्यक्रम में पं. सनत जैन (रजवांस), डॉ. संजय जैन (नेमीनगर), डॉ. नीरज जैन (GSITS) श्री कैलाश लुहाड़िया, श्रीमती साधना मादावत एवं श्री इन्द्र कुमार सेठी जी की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

श्री गिरीश पाटोदी परिवार के आतिथ्य की सभी ने प्रशंसा की। सभी आगन्तुक विद्वानों को आचार्य श्री ने साहित्य एवं जप माला प्रदान कर आशीर्वाद दिया।

डॉ. अनुपम जैन  
संगोष्ठी संयोजक



कमेटी के राष्ट्रीय महामंत्री श्री संतोष जैन पेंढारी, राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री शिखरचंद पहाड़िया श्री अशोक जैन तथा अन्य मुनिसुव्रतनाथ भगवान, पैठण के दर्शन करते हुए

## हमारे नये सदस्य

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी महापरिवार में हम हृदय की गहराईयों से आप सभी का स्वागत करते हैं, अभिनन्दन करते हैं।

### आजीवन सदस्य



श्री पदमचंद निर्मल कुमार संघी,  
जयपुर (राज.)



श्री प्रदीप कुमार प्रेमचन्द जैन (सौगानी)  
जयपुर (राज.)



श्री निर्मल कुमार शुभकरण जैन  
पटना, (बिहार)



श्रीमती नीता जीवन्धर जैन शास्त्री  
जबलपुर (म.प्र.)



श्री अपूर्व जीवन्धर जैन  
जबलपुर (म.प्र.)



कुमारी अर्पणा जीवन्धर जैन  
जबलपुर (म.प्र.)



श्री आर्चित जीवन्धर जैन  
जबलपुर (म.प्र.)



श्री सुपार्श सुरेशकुमार काला  
मुंबई (महा.)



श्री शैलेश सुबोधकुमार पांड्या  
जयपुर (राज.)



श्री रितेश रमेश लुहाडिया  
जयपुर (राज.)



श्री संदीप इंदरचंद कटारिया  
जयपुर (राज.)



श्री रमेश के. जैन  
जयपुर (राज.)



श्री अनिलकुमार सुरेशचंद जैन  
जयपुर (राज.)



श्रीमती डॉ. नम्रता अनिलकुमार जैन  
जयपुर (राज.)



श्री विवेक महावीर जैन  
आगरमालवा (म.प्र.)



श्री गोवर्धनलाल शंकरलाल जैन (भिंडर)  
उदयपुर (राज.)



श्री मुकेशकुमार प्रकाशचंद जैन (गंगवाल)  
जशपुरनगर (छत्तीसगढ़)



श्री वरुण शिखरचंद पहाड़िया  
मुंबई (महा.)



श्री महेशचंद्र गुलाबचंद टोंग्या  
इंदौर (म.प्र.)



श्री राकेशकुमार नरेन्द्रकुमार जैन  
जशपुरनगर (छत्तीसगढ़)



श्री सतीश कवरीलाल कासलीवाल  
मालेगांव नाशिक (महा.)



श्रीमती निरुपमा सतीश कासलीवाल  
मालेगांव नाशिक (महा.)



श्री जिनेश संजय पापड़ीवाल  
औरंगाबाद (महा.)



श्रीमती ऋद्धि अजय पापड़ीवाल  
औरंगाबाद (महा.)



श्री पियूष विजय पापड़ीवाल  
औरंगाबाद (महा.)



*With Compliments*

From:



**GUJARAT FLUOROCHEMICALS LTD.**

(Company of Siddho Mal-Inox Group)



GROUP OF COMPANIES

Corporate office :  
INOX Towers, 17, Sector 16-A,  
NOIDA - 201 301 (U.P.)  
Tel: 0120-614 9600  
Email : [contact@gfl.co.in](mailto:contact@gfl.co.in)



New Delhi Office :  
612-618, Narain Manzil, 6<sup>th</sup> Floor,  
Barakhamba Road,  
New Delhi - 110 001  
Tel: +91-11-23327860  
Email : [siddhomal@vsnl.net](mailto:siddhomal@vsnl.net)